
चन्दामामा
जून १९७३



अमर वाणी

तृणा दपि लघु स्थूलः,
तूला दपि च याचकः,
वायुना किम् ननीतो सौ?
त मयम् याचये दिति! ॥ १ ॥

[तिनके से रूई हल्की है, रूई से भी याचक हल्का है। लेकिन हवा याचक को क्यों उड़ा नहीं देती? क्योंकि वह उससे भी याचना करेगा, इसलिए ही।]

बालसखीत्व, मकारण हास्यम्,
स्त्रीषु विवाद, मसज्जन सेवा,
गार्दभयान, मसंस्कृतवाणी,
षट्सु नरो लघुता मुपयाति ॥ २ ॥

[बच्चों से मैत्री, अकारण हँसी, स्त्रियों के साथ झगड़ा करना, दुष्ट की सेवा, गधे की सवारी, संस्कार हीन वाणी–ये छठों हल्की हैं।]

किम् पौरुषम् रक्षति यो न वार्तान्?
किम् वा धनम् नार्थिजनाय यत्स्यात्?
सा किम् क्रिया या न हितानुबद्धा?
किम् जीवितम् साधु विरोधि यद्वै? ॥ ३ ॥

[शरणागतों की रक्षा न करनेवाला पौरुष ही किसलिए? याचकों को न दिया जानेवाला धन ही क्यों? हित विहीन काम से ही क्या मतलब है? इसी प्रकार अच्छे लोगों के साथ शत्रुता मोलनेवाली जिंदगी ही क्यों?



दो विवाह

चंडीपुर नामक नगर में देवस्वामी नामक एक ब्राह्मण रहा करता था। उसके कमल लोचना नामक एक कन्या थी। वह बड़ी सुंदर थी। देवस्वामी के कुसुमायुध नामक एक शिष्य था। कुसुमायुध और कमल लोचना गुप्त रूप से प्यार करते थे।

इस बीच देवस्वामी ने अपनी पुत्री का विवाह एक और युवक के साथ निश्चित किया। यह समाचार मिलते ही कमल लोचना ने अपने प्रियतम कुसुमायुध के पास यों खबर भेजी: "मेरे पिता ने एक दूसरे युवक के साथ मेरा विवाह करने का निश्चय किया है। मैंने तुमको अपने पति के रूप में वरण किया है, इसलिए तुम किसी तरह मुझे अपने घर से उठा ले जाने का उपाय सोच लो।"

यह खबर मिलते ही कुसुमायुध ने कमल लोचना को अमुक स्थान पर आ जाने का समाचार भेजा और उस स्थान पर अपने सेवक को घोड़े के साथ भेजा।

कमल लोचना पूर्व निर्णीत प्रदेश में आकर घोड़े पर सवार हो गयी। मगर कुसुमायुध के सेवक ने घोड़े को अपने मालिक के पास न ले जाकर दूसरे मार्ग में बढ़ाया। सवेरा होते होते वे दोनों एक दूसरे नगर में पहुँचे।

"हम कहाँ जा रहे हैं? तुम्हारे मालिक कहाँ?" कमल लोचना ने सेवक से पूछा।

"मेरे मालिक यहाँ कहाँ हैं? उनसे तुम्हारा क्या काम है? हम दोनों शादी कर लेंगे!" सेवक ने जवाब दिया।

कमल लोचना बड़ी सूझ-बूझवाली युवती थी। उसने सेवक से कहा–"तुमने यह बात मुझसे पहले क्यों नहीं बतायी? देरी ही क्यों? तुम जल्दी जाकर शादी के लिए आवश्यक सारी सामग्री लेते आओ।"

विनोद खन्ना

कमल लोचना की बात पर यक़ीन करके वह दुष्ट सेवक कमल लोचना और घोड़े को एक बगीचे में छोड़ शादी के लिए आवश्यक सामग्री ले आने नगर में गया।

सेवक के जाते ही कमल लोचना घोड़े पर सवार हो फूल बेचनेवाले एक वृद्ध के घर पहुँची। उसे सारी बातें सुनायी। वृद्ध ने उस युवती की सारी कहानी सुनकर अपने घर उसे आश्रय दिया।

इस बीच शादी के लिए आवश्यक सामग्री लेकर सेवक बगीचे में पहुँचा। वहाँ पर कमल लोचना और घोड़े को न पाकर उसने भांप लिया कि उसके साथ धोखा हो गया है। तब वह अपने मालिक के पास लौट कर बोला–"मालिक, आप भी कैसे भोले हैं? औरतों के मर्म को समझ नहीं पाये। मुझे कुछ लोगों ने देखा और बन्दी बनाया। कुछ लोग घोड़े को हड़प कर ले गये। मैं बड़ी मुश्किल से जान बचाकर यहाँ पर आया हुआ हूँ।"

[illegible] पर यक़ीन किया।

इसके कुछ दिन बाद कुसुमायुध के पिता ने एक दूसरी कन्या के साथ उसकी शादी पक्की की। वर पक्ष के लोग अपने शहर को लौटते कमल लोचना के नगर में एक बगीचे में ठहरे। कुसुमायुध अकेले नगर देखने को चल पड़ा। उस वक़्त कमल लोचना ने कुसुमायुध को देखा। उसने अपने को आश्रय देनेवाले से यह बात कही। वह वृद्ध कुसुमायुध से मिल कर उसे अपने घर ले आया।

कुसुमायुध ने कमल लोचना को देखा। सारी बातें उसके ज़रिये जान लीं और उसी वक़्त कमल लोचना के साथ शादी कर ली। इसके बाद कुसुमायुध ने अपने सेवक को दण्ड दिया, साथ ही अपने पिता के द्वारा निश्चित की गयी कन्या के साथ भी कुसुमायुध ने विवाह कर लिया। क्योंकि वह उस कन्या के साथ विवाह करने घर से निकल न पड़ता तो उसे कमल लोचना प्राप्त न होती।





पिंड छूट गया

एक गाँव में लगभग सभी लोग बेवकूफ़ थे। उस गाँव में एक दिन एक नाटा आदमी आया। दुपहर तक सारा गाँव घूमता रहा, तब एक उजड़े घर को देख उसके सामनेवाले चबूतरे पर जा बैठा।

ठीक उसके सामने एक क़ीमती मकान था जिसके सामने एक फ़कीर आ खड़ा हुआ। वह फ़कीर घुटनों तक काला चोगा पहने हुए था। उसके हाथ एक छड़ी थी। छड़ी के एक छोर पर सिंह के सरवाली मूठ थी।

फ़क़ीर ने अपनी छड़ी से उस मकान की देहली पर दे मारा और चिल्ला कर कहा–"अरी कमबख्त, भिक्षा दे दो।"

इसके दूसरे ही क्षण उस घर की मालिकिन कांपते हुए आ पहुँची और भिक्षा की गठरी दे गयी। फ़कीर उस गठरी को लेकर चलता बना।

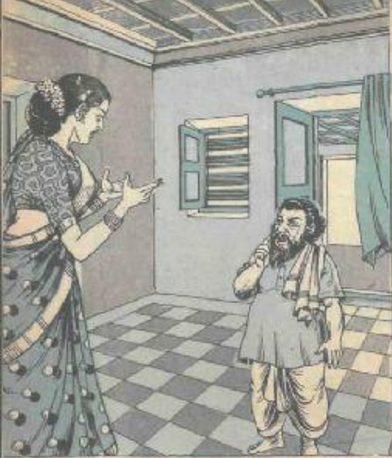
इस घटना को देख नाटा आदमी अचरज में आ गया। वह सोचने लगा कि वह औरत फ़कीर को देख क्यों डर गयी? उसके साथ फ़कीर ने अच्छा व्यवहार भी नहीं किया था, फिर भी उसे भिक्षा क्यों दी? अपनी यह शंका दूर करने के लिए नाटा आदमी उस औरत के पास पहुँचा। उसने पूछा–"माईजी, तुमने उस फ़कीर को गालियाँ न देकर भिक्षा क्यों दी?"

औरत ने नाटे की ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देखा और पूछा–"क्या तुम नहीं जानते?"

"मैं नहीं जानता, मैं आज ही इस गाँव में आया हूँ।" नाटे ने जवाब दिया।

इस पर औरत नरम शब्दों में बोली–"क्या बताऊँ बेटा? यह फ़कीर हमारे पीछे एक पिंड सा लग गया है। कोई नहीं जानता कि यह कहाँ से आया है। तुमने उसके हाथ में एक छड़ी देखी है न?

भगवती प्रसाद



छड़ी से वह जिस घर की देहली पर मारेगा, उस घरवालों को उसे उसकी मनचाही भिक्षा देनी पड़ती है। छड़ी की मार देहली पर पड़ते ही लगता है कि मन को किसी माया ने घेर लिया हो। लोग होश भी खो बैठते हैं। उस फ़कीर के चले जाने के बाद ही माया हट जाती है और लोग होश में आ जाते हैं। उसके चले जाने के बाद उसे लाख गालियां देने से क्या फ़ायदा? वह भिक्षा लेकर गाँव के बाहर के बगीचे में चला जाता है।"

नाटा आदमी ये बातें सुन आश्चर्य में आ गया और बोला–"तब तो वह रोज़ इस तरह भिक्षा मांगने के बदले किसी [illegible] व्यक्ति को [illegible] माया का शिकार बनाकर उससे काफी धन वसूल कर सकता है और आराम से रह सकता है न?"

"मैंने तुम्हें बताया कि वह भिक्षावाली छड़ी है। खाने के लिए भीख मांगने तक ही उसका असर रहता है, धन मांगने पर उसका असर जाता रहता है।" उस औरत ने समझाया।

"क्या गाँव के किसी आदमी ने भी उस छड़ी को छीनने का प्रयत्न नहीं किया?" नाटे ने फिर पूछा।

औरत ने सहमी हुई आवाज़ में उत्तर दिया–"ओह! इतनी हिम्मत किसमें है?"

"मैं उस भिक्षावाली छड़ी को उठा लाता हूँ।" नाटे ने कहा।

"बेटा, यह बात मुझसे कहने से क्या फ़ायदा? शाम को सब लोग पुराण सुनने के लिए राममंदिर में जमा हो जाते हैं। उन लोगों से क्यों नहीं बताते?" यों कहकर औरत ने दर्वाज़ा बंद कर लिया।

उस दिन शाम को राममंदिर के पास जाकर नाटा आदमी सबसे मिला और उन्हें अपनी योजना का परिचय देकर कहा– "आप लोगों की सहायता हो तो मैं यह काम कर सकता हूँ।"

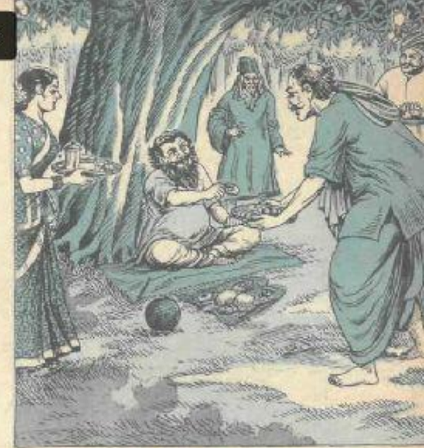
कुछ लोगों ने नाटे की बातों पर ध्यान न दिया। कुछ लोग उसकी शक्ल देखकर [illegible] तुम्हें किस तरह की मदद चाहिये?"

नाटे ने उन लोगों को अपनी योजना का पूरा परिचय दिया और तब वह अपने निवास की ओर चल पड़ा।

दूसरे दिन सवेरे आम के बगीचे में फ़कीर जब नींद से जाग पड़ा तब उसने देखा कि थोड़ी दूर पर नाटा आदमी गहरी नींद सो रहा है। फ़कीर ने उसकी ओर विशेष ध्यान नहीं दिया, अपने सिरहाने के नीचे रखी छड़ी लेकर गाँव की ओर चल पड़ा।

फ़कीर भिक्षा लेकर लौटा तो दुपहर हो गयी थी। उसने नाटे की ओर देखा। वह पेड़ से सटकर ऊँघ रहा था। उसके सामने एक मिट्टी का बर्तन औंधे मुँह रखा गया था। घड़े के पास लोहे की एक पतली छड़ी रखी हुई थी।

पेड़ पर बैठा कौआ बोल उठा। तब नाटा चौंक कर उठ बैठा। उसने फ़कीर की ओर तीक्ष्ण दृष्टि से देखा। तब लोहे की छड़ी लेकर मिट्टी के बर्तन पर तीन बार दे मारा। इतने में ही गाँव से कुछ लोग आ पहुँचे और नाटे के सामने तरह-तरह के व्यंजन रख दिये। उनमें से नाटे ने अपने लिए आवश्यक चीज़ें मात्र लेकर उन्हें वापस भेज दिया।



यह दृश्य देख फ़कीर चकित रह गया। उसे लगा कि उसकी इस छड़ी की अपेक्षा मिट्टी का बर्तन ज़्यादा उपयोगी है। उसे तो धूप में जाकर छड़ी की मदद से आवश्यक भिक्षा ले आनी है। मगर इस नाटे के पास सब तरह के खाने के पदार्थ अपने आप आ जाते हैं। उनमें से वह अपने लिए आवश्यक चीज़ें ले लेता है। वह एक जगह बैठे-बैठे अपना पेट भर रहा है। उसका काम बड़ा ही आरामदेह है।

यह सोचकर फ़कीर नाटे के पास आया और बोला–"कहो भाई, कैसे हो? कुशल हो न?"

"भाई साहब, मैं अपनी बात क्या कहूँ? पहले तुम बताओ, तुम्हारी तबीयत कैसी है?" नाटे ने फ़क़ीर का परामर्श किया।

"भाई, क्या बताऊँ? उम्र बढ़ती जा रही है। बूढ़ा हो गया हूँ, गाँव के चार-पाँच घर घूमने में परेशान हो जाता हूँ।" फ़क़ीर ने मिट्टी के बर्तन की ओर आशा भरी दृष्टि से देखते हुए कहा।

नाटे ने इसका कोई जवाब नहीं दिया। क्यों कि फ़क़ीर का विश्वास अब तक मिट्टी के बर्तन पर जमा न था, इसलिए उसने इसकी चर्चा नहीं की।

मगर उस दिन रात को भी नाटे ने मिट्टी के बर्तन पर लोहे की छड़ी से तीन बार दे मारा और बैठे-बैठे खाना मंगवा लिया। इसे देख फ़क़ीर विस्मय में आ गया और बोला-"भाई, सुनो! तुम तो जवान हो, चार-पांच गलियाँ घूम कर भिक्षा मांग सकते हो। मैं बूढ़ा हो गया हूँ। क्या तुम मेरी छड़ी लेकर अपना बर्तन मुझे दे सकते हो?"

कोई दूसरा मांग बैठता तो मैं न देता, लेकिन तुमने मेरे साथ भाई का नाता जोड़ दिया, इसलिए मैं यह बर्तन तुम्हें दे देता हूँ।" यों कहते नाटे ने फ़क़ीर की छड़ी लेकर अपना बर्तन उसे दे दिया।

दूसरे दिन सवेरे फ़क़ीर ने नींद से जागकर देखा, नाटे का कहीं पता न था। वह दुपहर तक आम के बगीचे में ही बैठा रहा और लोहे की छड़ी से बर्तन पर तीन बार दे मारा। मगर उसके पास कोई न आया। आखिर खीझकर उसने बर्तन को जमीन पर दे मारा, वह टूट गया। इस पर फ़क़ीर भीख मांगने गाँव में गया, मगर गाँववालों ने उसे इस तरह दुतकार कर भगा दिया जैसे कुत्ते को भगा दिया जाता है।

तब फ़क़ीर उस गाँव को छोड़कर कहीं चला गया। यह खबर जब सारे गाँव में फैल गयी, तब गाँववाले बहुत खुश हुए।





ऋक्ष पर्वत

[१२]

[लुटेरों का नेता समरबाहु की रक्षा करने खड्गवर्मा और जीवदत्त चल पड़े। उन्हें एक जंगल में गुलामों से काम करानेवाले भालू की खाल धारण किये हुए लोग दिखाई दिये। खड्गवर्मा और जीवदत्त उनके समीप जानेवाले ही थे, तभी उन्हें एक जगह धुआँ उठते दिखाई दिया। इस पर खड्गवर्मा और जीवदत्त उस ओर बढ़े। तब-]

खड्गवर्मा और जीवदत्त उन पेड़ों के निकट गये जहाँ से धुआँ उठ रहा था। एक पेड़ पर चढ़ कर देखने लगे कि भालू की खालोंवाला दल क्या कर रहा है। जहाँ से धुआँ उठ रहा था, उसके निकट ही जमीन में धँसा एक सुरंग उन्हें दिखाई दिया। वहाँ पर भालू की खालवाले शिकार खेल कर लाये हुए जानवरों को आग में जलाने लगे। कुछ लोग डफली बजाते भालुओं को नचाते अपना मनोरंजन करने लगे।

खड्गवर्मा और जीवदत्त जब उस प्रदेश में पहुँचे, तब तक भालू की जाति का नेता समरबाहु को सुरंग के भीतर ले गया था, इसलिए उन्हें वह दिखाई नहीं दिया। मगर उन्होंने देखा कि ऊपर से सुरंग में जाने के लिए भीतर की ओर सीढ़ियाँ बनी हुई हैं।



"जीवदत्त, इन जंगलियों का निवास इसी सुरंग में मालूम होता है। उस सुरंग में से होकर जंगल में जाने के लिए कोई गुप्त मार्ग अवश्य होगा। हमें तो ऐसा मालूम नहीं होता कि ये लोग समरबाहू को जला कर खा रहे हो!" खड्गवर्मा ने बताया।

जीवदत्त ने उस प्रदेश को ध्यान से देखा, तब धीमे स्वर में कहा–"मुझे लगता है कि स्वर्णाचारी यह सोचकर नाहक़ डर गया है कि ये लोग मानव-भक्षक हैं। ये लोग जंगल में जिस ढंग से खेतीबारी करते हैं, उसे देख लगता है कि इनके हाथ में जो लोग पड़ जाते हैं, उन्हें अपना गुलाम

समरबाहू और उसके अनुचरों को ये लोग सुरंग के भीतर ले गये होंगे। मगर निश्चय ही ये लोग मानव-भक्षक नहीं हैं।"

खड्गवर्मा के मन में भी यही विचार पैदा हुआ। वह पेड़ की एक ऊँची डाल पर चढ़ कर बोला–"ये लोग शिकार किये हुए जानवरों को जला रहे हैं; आदमियों को नहीं।"

खड्गवर्मा और जीवदत्त यों बात कर ही रहे थे तभी भालू की जाति का नेता समरबाहू और उसके अनुचर को अपने गुरु के सामने ले गया। झुक कर प्रणाम करके बोला–"गुरु भल्लूक! ये दोनों मुझे जंगल में प्राप्त हो गये हैं। देखने में ये वीर, साहसी और लड़ाकू लगते हैं। इन्हें हमारे अधीन में लाना मुश्किल मालूम होता है।"

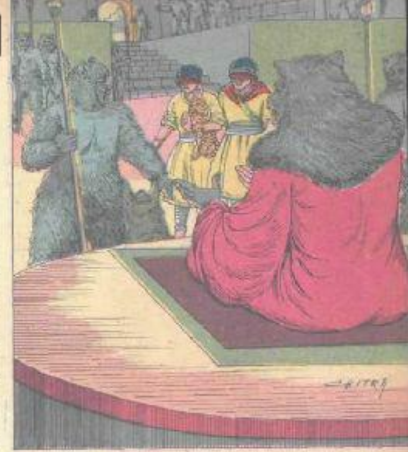
गुरु भल्लूक एक गोल समतल प्रदेश में एक ऊँची शिला पर बैठा हुआ था। उसके चेहरे को ढकते एक भालू का सर लटक रहा था। गुरु भल्लूक के आसन के दोनों तरफ़ दो भयंकर भेडिये मुंह बाये खड़े हुए थे। भाले हाथ में लिये भल्लूक जाति के कुछ लोग जहां-तहां खड़े हो बंदियों की ओर ताक रहे थे।

के लोग समरबाहू और उसके अनुचर को कुछ ही क्षणों में मौत के मुंह में भेजनेवाले हैं। वे भी यह सोचकर डर रहे थे कि आदिवासी उन पर भेडियों को उकसा कर उनके द्वारा मरवा डालेंगे।

भल्लूक जाति के नेता की बातें सुन गुरु भल्लूक सर हिलाते समरबाहू की ओर देखता रहा, तब बोला–"तुम्हारा वेष देखने से लगता है कि तुम शहर के निवासी हो; लेकिन तुम इस जंगल में किस काम से आये हो?"

समरबाहू की समझ में न आया कि इस सवाल का क्या जवाब दिया जाय, तब थोड़ी देर तक सोचकर बोला–"मैं शहर का बाशिंदा नहीं हूं। सिंध रेगिस्तान से इस प्रदेश में आया हुआ हूँ। सैकड़ों की संख्या में मेरे अनुचर हैं। उन्हें कभी न कभी मेरे बंदी हो जाने की खबर लग ही जायगी। तब वे लोग तुम्हें और तुम्हारे इस सुरंगवाले गृह का सर्वनाश कर बैठेंगे।"

"अरे, तुम्हारा कंठ-स्वर और पौरुष तारीफ़ के लायक़ है।" यों कहते गुरु भल्लूक जोर से हँस पड़ा और बोला–"तुम्हारे अनुचरों के मेरे सुरंगवाले गृह तक पहुँचने के पहले ही मेरे भल्लूक सेवक



उन्हें भेडियों की भीड़ का आहार बना डालेंगे। इसलिए तुम मेरे सामने डींग मत मारो। मैं जानता हूँ कि तुम्हें और तुम्हारे इस अनुचर को अपने अधीन करके अन्य गुलामों के साथ तुम लोगों से भी खेती के काम कैसे कराने हैं।"

गुरु भल्लूक की बातें पूरी हो गयी थीं तभी उसके दो अनुचर दौड़े-दौड़े वहां पर आ पहुँचे और समरबाहू तथा उसके अनुचर को देख ठिठककर रह गये। गुरु भल्लूक ने उनसे पूछा–"कहो, बात क्या है?"

आगंतुक व्यक्ति यह सवाल सुनकर समरबाहू की ओर ताकने लगे। तब गुरु



भल्लूक ने खीझकर सर हिलाते कहा–"चाहे वह गुप्त बात भले ही क्यों न हो, ये दोनों बंदी हमारा कुछ बिगाड़ नहीं सकते। इन दोनों को मैं अभी भेड़ियों की चट्टान के पास भेज रहा हूँ।"

"गुरु भल्लूक! यह अत्यंत गुप्त बात है। आप अकेले को ही यह बात सुननी है।" यों कहते दोनों ने अपने गुरु के निकट जाकर गुप्त रूप से उसके कान में कुछ कहा।

गुरु भल्लूक पल-भर के लिए आश्चर्य चकित रह गया। तब समरबाहू को पकड़ लानेवाले भल्लूक जाति के नेता की ओर क्रुद्ध दृष्टि से देख बोला–"तुम्हारी अक्ल [illegible] है!" यों कह पल-भर मौन रहा, तब बोला–"अच्छी बात है, इन दोनों बंदियों को भेड़ियों की चट्टान के पास छोड़ आओ। पहले इनके बंधन खोल दो और दोनों के हाथों में भाले दे दो।"

गुरु भल्लूक का आदेश प्राप्त होते ही उसके अनुचरों ने समरबाहू और उसके सेवक के बंधन खोल दिये। उनके हाथों में भाले देकर बोले–"अब चलो।" इसके बाद उन्हें सभामण्डप के बाजू में स्थित एक सुरंग-मार्ग में ले गये।

उनके जाते ही गुरु भल्लूक ने अपने अनुचरों की ओर मुड़कर कहा–"इन नये व्यक्तियों ने हमारे सुरंग के रहस्यों को जान लिया होगा। उन पर अच्छी निगरानी रखो। अगर वे इस प्रदेश से भागने की कोशिश करें तो उन्हें प्राणों के साथ पकड़कर यहाँ पर ले आओ।"

"जो आज्ञा, गुरु भल्लूक!" यों कहकर उसके दस-बारह अनुचर झुककर सलाम करके सुरंग की सीढ़ियों की ओर चले गये।

पेड़ की डालों में बैठे हुए खड्गवर्मा और जीवदत्त को लगा कि दिन के वक़्त भल्लूक जाति के लोगों के सुरंग के पास जाना खतरे से खाली नहीं है। भल्लूक जाति के लोग भल्लूकों को नचाते शिकार [illegible] उनका मांस खा रहे थे। दुपहर की कड़ी धूप से सारा जंगल तप रहा था। जीवदत्त ने पेड़ पर से नीचे उतरते खड्गवर्मा से कहा–"खड्गवर्मा, हमें जो कुछ देखना था, हमने देख लिया। यहाँ पर समय बिताना बेकार है। भूख सता रही है। यहीं पास के किसी तालाब में स्नान करके पेड़ों के फल खाना होगा। अंधेरा होने के बाद सुरंग में जाने का प्रयत्न करेंगे।"

खड्गवर्मा जीवदत्त की बातें सुन चुपचाप पेड़ से उतर आया। दोनों पानी की खोज में चल पड़े। थोड़ी देर बाद एक तालाब के निकट पहुँचे। उस तालाब के चारों ओर घने झाड़-झंखाड और वृक्ष खड़े थे। जंगली जानवरों के तालाब के पास पानी की खोज में आने व जाने के निशान जीवदत्त को दिखाई दिये।

"खड्गवर्मा, हमें जल्दी स्नान समाप्त करके यहाँ से जाना उचित होगा। लगता है कि जंगली जानवर और भल्लूक जाति के लोग इस तालाब का पानी इस्तेमाल करते हैं।" जीवदत्त ने कहा।

जीवदत्त यों कह ही रहा था कि तभी थोड़ी दूर में झाड़ियों में से चार-पांच जंगली मुर्गे चिल्लाते बाहर आये। उन्हें देखते ही उन पर बाण का निशाना करके छोड़ते खड्गवर्मा बोल उठा–"जंगली मुर्गों का मांस खाये काफ़ी दिन हो गये हैं।"





बाण सनसनाते चला गया। वह किसी जंगली मुर्गों को जा नहीं लगा। वे सब मुर्गे चिल्लाते उड़ गये। मगर इसके दूसरे ही क्षण उन्हें एक आदमी की चिल्लाहट सुनायी दी–"हे गुरु भल्लूक! मैं मर गया!"

यह चिल्लाहट सुनते ही खड्गवर्मा और जीवदत्त पल-भर के लिए चकित रह गये। "खड्गवर्मा, यह कैसी विचित्र बात है? तुमने जो बाण छोड़ा, वह जंगली मुर्गे को न लगा, बल्कि झाड़ी में छिपे किसी जंगली आदमी को जा लगा है। लेकिन यह गुरु भल्लूक कौन है?" यों कहते जीवदत्त झाड़ियों की ओर दौड़ पड़ा। खड्गवर्मा ने भी उसका अनुसरण किया।

पास जाकर देखा, भल्लूक चर्म धारण किया हुआ एक आदमी चटपटा रहा था। खड्गवर्मा का बाण उसकी छाती में चुभ गया था।

जीवदत्त ने उसके निकट जाकर कहा–"तुम्हारा वेष देखते ही हम समझ गये कि तुम कौन हो। हमने तुम्हें मारने के लिए बाण नहीं छोड़ा। लेकिन तुम इन झाड़ियों में क्या कर रहे थे?"

घायल व्यक्ति ने जीवदत्त की बातें सुनीं, मगर वह जवाब देने की हालत में न था। वह झाड़ियों में इधर-उधर लोटते गुनगुनाने लगा–"गुरु भल्लूक! गुरु भल्लूक!"

"जीवदत्त! यह एक-दो क्षण से ज़्यादा देर तक जी नहीं सकता। मेरा संदेह है कि ये जंगली मुर्गों को पकड़ने के लिए इन झाड़ियों में ताक लगाये बैठा होगा या हम पर निगरानी रखने के लिए होगा!" खड्गवर्मा ने कहा।

"तुम्हारे सवाल का जवाब देनेवाले की आत्मा गुरु भल्लूक में मिल गयी होगी?" यों कहते जीवदत्त पीछे की ओर मुड़ा।

खड्गवर्मा ने भल्लूक जाति के व्यक्ति की ध्यान से जाँच की, उसे पता चला कि

साथ झाड़ियों में से निकल कर तालाब के किनारे आ पहुँचा।

इसके बाद दोनों ने तालाब में स्नान किया। पास के वृक्षों से फल तोड़कर खाया। एक वृक्ष की छाया में शाम तक विश्राम किया, तब उन्हें संदेह हुआ कि सुरंग में रहनेवालों ने उनकी गति-विधियों का अनुमान लगाया है। फिर भी उन दोनों ने यह निश्चय कर लिया कि समरबाहु को बंधनों से मुक्त किये बिना उनका वहाँ से जाना उचित नहीं है।

सूर्यास्त के थोड़ी देर बाद सारे जंगल में अंधेरा छा गया। तब खड्गवर्मा और जीवदत्त सुरंग की ओर चल पड़े। वे यह सोचकर सावधानी से चारों ओर देखते चलने लगे कि कोई पीछे से उनका अनुसरण तो नहीं कर रहे हैं। थोड़ी देर में वे सुरंग के पास पहुँचे। सुरंग के ऊपर या नीचे सीढ़ियों के पास भी उन्हें कोई पहरेदार दिखाई नहीं दिये।

"खड्गवर्मा, यहाँ की हालत समझ में आ गयी है न? इस सुरंग में रहनेवाले भल्लूक जाति के लोग समझते हैं कि वे हमें बड़ी होशियारी से बन्दी बनाने जा रहे हैं और हम लोग जान-बूझकर उनके बन्दी बन रहे हैं...पर बेचारे यह नहीं जानते कि इसके बाद उनका पूरा दल सर्वनाश होने जा रहा है!" जीवदत्त ने सुरंग की सीढ़ियाँ उतरते हुए कहा।



खड्गवर्मा भी उसके पीछे सीढ़ियां उतरने लगा। दोनों इस तरह कुछ सीढ़ियां उतरकर अंधकार से भरे एक मोड़ को पार करने जा रहे थे, तभी दस-बारह भल्लूक जाति के लोग झट अंधेरे से बाहर आये और भाले उठाकर बोले–"ठहर जाओ, भागने की कोशिश करोगे तो तुम लोगों की छाती में भाले चुभो दिये जायेंगे।"

जीवदत्त ने उनकी ओर देख हँसते कहा–"अरे, तुम लोग इन बेजान भालों का हमें शिकार क्यों बनाना चाहते हो? भेड़ियों का आहार बना दो। पर इसके पहले हमें गुरु भल्लूक के दर्शन तो करा दो।"

इस पर भल्लूक जाति का एक व्यक्ति धीमे स्वर में बोला–"उफ़! जोर से मत बोलो! गुरु भल्लूक अपनी आराध्य देवी वृकेश्वरी की पूजा में निमग्न हैं। तुम लोगों को हम पहले भेड़ियोंवाली चट्टान के पास छोड़ देते हैं। वहाँ से अगर तुम ... दर्शन करा दिये जायेंगे।"

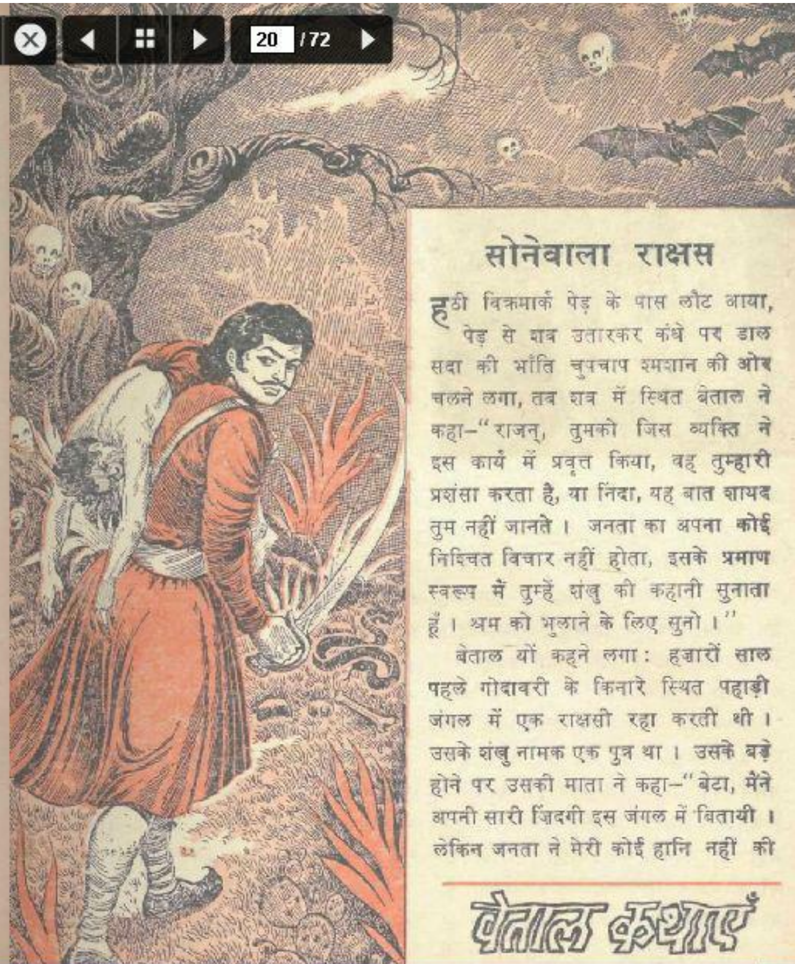
"अच्छी बात है! जल्दी बताओ, भेड़ियोंवाली वह चट्टान कहाँ?" जीवदत्त ने अपनी हंसी को रोकते हुए कहा।

"जल्दबाजी मत करो; वहीं पर जा रहे हैं।" यों कहते भल्लूक जाति के लोग खड्गवर्मा के आगे-पीछे फैलकर सुरंग की ओर बढ़े। उन्हें कहीं दूर पर भेड़ियों के गर्जन और भय के मारे चिल्लाने वाले आदमियों की भयंकर आवाज उस सुरंग में प्रतिध्वनित होते सुनाई दी।

"खड्गवर्मा, यह आवाज समरबाहू और उसके अनुचर की होगी। कहीं भेड़िये उन्हें मार डालने का प्रयत्न तो नहीं कर रहे हैं?" जीवदत्त ने कहा।

खड्गवर्मा इसका जवाब देने को ही था, तभी भल्लूक जाति में से एक ने भाला चमकाते कहा–"चुप रह जाओ, एक-दो क्षणों में तुम लोग अपनी आँखों से देखोगे कि वे भेड़िये क्या कर रहे हैं?" (और है)



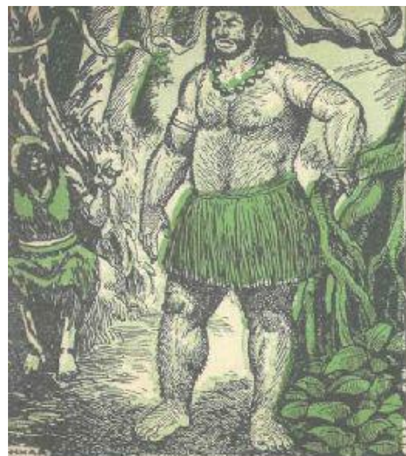


सोनेवाला राक्षस

हठी विक्रमार्क पेड़ के पास लौट आया, पेड़ से शव उतारकर कंधे पर डाल सदा की भाँति चुपचाप श्मशान की ओर चलने लगा, तब शव में स्थित बेताल ने कहा–"राजन्, तुमको जिस व्यक्ति ने इस कार्य में प्रवृत्त किया, वह तुम्हारी प्रशंसा करता है, या निंदा, यह बात शायद तुम नहीं जानते। जनता का अपना कोई निश्चित विचार नहीं होता, इसके प्रमाण स्वरूप में तुम्हें शंखु की कहानी सुनाता हूँ। श्रम को भुलाने के लिए सुनो।"

बेताल यों कहने लगा: हजारों साल पहले गोदावरी के किनारे स्थित पहाड़ी जंगल में एक राक्षसी रहा करती थी। उसके शंखु नामक एक पुत्र था। उसके बड़े होने पर उसकी माता ने कहा–"बेटा, मैंने अपनी सारी जिंदगी इस जंगल में बितायी। लेकिन जनता ने मेरी कोई हानि नहीं की

वेताल कथाएँ



और न मैंने जनता की कोई हानि की। मेरी उस ढल गयी है। मैं तपस्या करके शिवजी में लीन हो जाऊँगी। तुम जंगल पर निर्भर हो जी नहीं सकते। इसलिए तुम मानव-समाज में जाकर उन्हें डरा-धमका या उनसे डरकर ही सही अपना पेट पाल लो।"

अपनी माँ के तपस्या करने चले जाने के बाद शंखु जंगल से चल पड़ा और उसने एक पहाड़ पर खड़े हो तराई में स्थित एक नगर की ओर देखा। उसने वहाँ पर मनुष्यों को देखा। उसे अपनी माँ की बात याद आयी कि जनता के बीच जाकर पेट पालना होगा। उसने सोचा कि यह काम बाद को देखा जायगा, पहले आराम करना है। वह पास में स्थित एक गुफा में पहुँचा। उसमें ठण्डी हवा चल रही थी। शंखु वहीं पर पैर पसार कर सो गया।

शंखु जब पहाड़ पर खड़े हो नगर की ओर विचित्र ढंग से देख रहा था, तब नगर के बाहर खेतों में काम करनेवाले कुछ लोगों ने उसे देखा और वे 'बाप रे राक्षस!' चिल्लाते शहर में दौड़ पड़े। उन लोगों ने शहर में जाकर सब को चेतावनी दी। इसके बाद कई हजार लोगों ने उस राक्षस को देखा था।

सब ने यही सोचा कि राक्षस जनता पर टूट पड़ेगा और सब को खा डालेगा। पांच-छे महीने बाद शहर में एक भी आदमी और जानवर बचा न रहेगा। नगर के राजा ने सब लोगों को भाले और तलवार देने का आश्वासन दिया। राक्षस को पहाड़ पर से उतरकर आते ही उसे मारने के लिए तरह-तरह के उपाय सोचे गये।

यही नहीं, उस दिन रात को शहर में कोई सोया नहीं। किसी ने दिया नहीं जलाया, अनेक लोग रात भर गलियों में घूमते रहें, सब की आँखें पहाड़ पर ही केन्द्रित थीं।

लेकिन राक्षस नगर के अन्दर न आया। दिन बीतते गये, पर राक्षस का पता न था। जनता का डर धीरे धीरे जाता रहा। कुछ लोगों ने कहा कि राक्षस कहीं चला गया होगा। जो हिम्मतवर थे, वे खेतों में जाकर अपने काम करने लगे। मवेशियों को खेतों में चराने ले गये।

इस तरह कई दिन और महीने गुज़र गये, पर कहीं राक्षस दिखाई न दिया। कुछ साहसी युवक परशु, कुल्हाड़ी, भाले इत्यादि लेकर पहाड़ पर चले गये। उन्हें एक जगह गुफा दिखाई दी। उसमें से उन्हें भयंकर खुर्राटे सुनाई देने लगे। साहसी युवक पहाड़ से उतरकर नगर में आये, सब को सूचित किया कि राक्षस कहीं नहीं गया है, वह गुफा के अन्दर सो रहा है। यह खबर सारे नगर में आग की तरह फैल गयी।

पंडितों ने बताया–"राक्षसों का बल नींद में है। इसलिए नींद से जागने पर कोई उन्हें हरा नहीं सकता।" यह बात सुनने पर जनता और डर गयी।

राजा ने अपने मंत्रियों को बुलाकर समझाया–"हमें समाचार मिला है कि राक्षस गुफा में सो रहा है। इस बात पर विचार कीजिय कि गुफा में उसके सोते समय ही मार डालना शायद आसान हो! पंडित बता रहे हैं कि नींद से जागने पर उसे हराना मुश्किल है।"

कुछ मंत्रियों ने सलाह दी–"राक्षस नगर के लिए हमेशा खतरनाक ही है, इसलिए मौक़ा मिलते ही उसे मार डालना है।"





मगर यह सलाह प्रधान मंत्री को पसंद न आयी। उसने यों समझाया– "महाराज, हम लोग शेर, बाघ, मत्त हाथी इत्यादि खूंख्वार जानवरों को पालतू बना रहे हैं, ऐसी हालत में इस राक्षस को पालतू बनाना कोई असंभव बात नहीं है। यह ज्यादा से ज्यादा एक सौ आदमियों का खाना खा सकता है, मगर यह कुछ हजार सैनिकों के बराबर है। राक्षस केवल खाना चाहता है। वह धोखा देना और षड्यंत्र रचना बिलकुल नहीं जानता। यदि उसे पालतु बनाया जायगा तो वह मनुष्य से ज्यादा विश्वासपात्र बना रहेगा। इसलिए उसे नींद से जागने दीजिए, हम

का भय न रहेगा। हम उसका पोषण करके उससे काम लेंगे। इससे हमारा फ़ायदा ही होगा।"

यह सुझाव राजा और अन्य मंत्रियों को भी बड़ा अच्छा लगा। इसके बाद जनता भी राक्षस के बारे में सहानुभूति दिखाने लगी। इसके कुछ समय बाद उस प्रदेश में अकाल पड़ा।

"राक्षस पहाड़ से उतरकर हमारे बीच क्यों नहीं आता? वह गोदावरी को हमारे नगर की तरफ़ मोड़कर ला सकता है! पाताल से गंगा को ऊपर ला सकता है! नाम के वास्ते हमारे लिए एक राक्षस है, पर उसके द्वारा हमारा कोई फ़ायदा नहीं होता।" नगर के बुजुर्गों ने कहा।

अकाल के साथ चोर और लुटेरों का बोलबाला बढ़ गया। रात के समय डाकू और लुटेरे सैकड़ों की संख्या में आकर नगर पर टूट पड़ते और जो भी उनका सामना करते, उन्हें मार डालने लगे। साथ ही जो कुछ अनाज और पशु बच रहें, उन्हें भी लूटकर ले जाने लगे।

इस पर बुजुर्गों ने सलाह दी–"राक्षस को बुला लाने का यही अच्छा मौक़ा है। जो हिम्मतवर हैं, वे सब गुफा में जाकर राक्षस को नींद से जगाकर ले आइये।"

खतरनाक है। नींद में रहनेवाला हमारी बातों पर ध्यान न देगा। उस वक़्त जो भी उसके सामने जायगा, उसे मार डालेगा।" युवकों ने डरते हुए कहा।

इसके एक साल बाद शत्रु राजा ने उस नगर पर हमला किया। अब उपेक्षा करने से कोई फ़ायदा नहीं। यह सोचकर सेनापति कुछ युवकों को साथ ले पहाड़ पर गया। राक्षस की गुफा का पता लगाकर उन लोगों ने गुफा के भीतर झाँककर देखा। मगर गुफा में राक्षस न था। वह कभी उस गुफा से कहीं चला गया था। नगर शत्रु राजा के अधीन हो गया। राक्षस जनता के बीच न आया था, इसलिए जनता ने उसे मन ही मन नाना प्रकार से गालियाँ दीं।

बेताल ने यह कहानी सुनाकर कहा– "राजन, नगर की जनता पहले राक्षस की याद कर डर गयी। फिर खुश हुई, अंत में गालियाँ भी दीं। आशीर्वाद भी दिया। लेकिन उस राक्षस के बारे में जनता का क्या विचार है? उसके प्रति जनता में प्रेम है, या नहीं? इस संदेह का समाधान जानते हुए भी न दोगे तो तुम्हारा सर टुकड़े टुकड़े हो जायगा।"

"इस पर विक्रमार्क ने यों उत्तर दिया– "जनता और राक्षस के बीच प्रेम और स्नेह का कोई प्रश्न ही नहीं उठता। जनता की दृष्टि में राक्षस एक महान शक्ति है। शक्ति का कोई न आदर करता है और न प्रेम ही। जब उन्हें यह प्रतीत होगा कि उसके द्वारा उनके लिए ख़तरा है, तब वे उसे देख डर जायेंगे। जब उन्हें यह मालूम होगा कि उसके द्वारा फ़ायदा होगा, तब वे लोभ में पड़ जायेंगे। यदि समय पर उसके द्वारा कोई सहायता प्राप्त न होगी, तब उसकी निंदा करेंगे।"

राजा के इस तरह मौन भंग होते ही बेताल शव के साथ गायब हो पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)



मूर्ख

एक बार अरब के सौदागरों ने उत्तम नस्ल के घोड़ों को लाकर कोसल राजा को दिखाया। राजा उन्हें देख बड़ा प्रसन्न हुआ। अधिक मूल्य देकर उन घोड़ों को ख़रीदा और दुबारा कुछ और घोड़ों को लाने के लिए दो लाख रुपये अग्रिम दे दिया।

इस घटना के कुछ समय बाद राजा ने मजाक में मंत्री से कहा कि अपने राज्य के एक सौ मूर्खों की सूची तैयार कर दिखावे। मंत्री ने मूर्खों की सूची तैयार करके राजा के हाथ में दी। उसमें पहला नाम राजा का था। राजा ने आश्चर्य में आकर पूछा–"इस सूची में मेरा नाम क्यों जोड़ा गया है?"

"महाराज, अरब के अजनबी सौदागरों को दो लाख रुपये अग्रिम देकर भेजने से बढ़कर मूर्खता क्या हो सकती है?" मंत्री ने कहा।

"अगर वे लोग घोड़े ले आवे, तो?" राजा ने पूछा।

"तब उस सूची में से आपका नाम काटकर उनके नाम जोड़े जायेंगे।" मंत्री ने झट जवाब दिया।





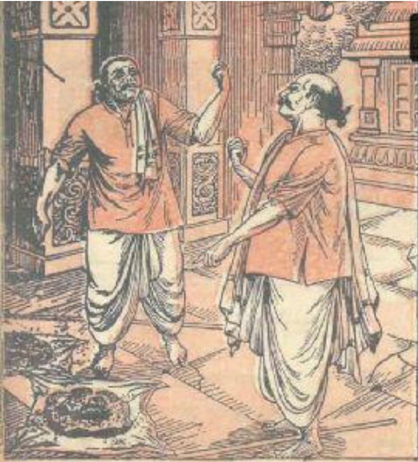
अनोखी दोस्ती

एक गांव में गोविंद और रामदास नामक दो दोस्त थे। मगर उनकी दोस्ती निश्चल न थी। कभी बढ़ती तो कभी घटती। उन्हें अपनी इस तरह की दोस्ती से प्रसन्नता न थी। लेकिन वे यह नहीं जानते थे कि उनकी दोस्ती को स्थिर बनाने के लिए क्या करना चाहिए? आखिर वे दोनों एक निर्णय पर पहुँचे। वह यह कि दोनों के बीच किसी प्रकार का दुराव व छिपाव न रखने के लिए भगवान के सामने शपथ ली जाय!

इसके वास्ते वे दोनों काशी के लिए रवाना हुए। रवाना होने के पहले गोविंद ने अपनी पत्नी द्वारा परोठे और लड्डू बनवाये। इसी तरह रामदास ने अपनी पत्नी से घी की पूड़ियां और जलेबियां बनवायीं। दोनों अपनी चीजें लेकर राह-खर्च के साथ घर से निकल पड़े।

दोनों दुपहर तक चलकर जब थक गये तब किसी पेड़ की छाया में आराम करने बैठ गये। दोनों भूख से परेशान थे। फिर भी उन लोगों ने अपने खाने की पोटलियां नहीं खोलीं। गोविंद ने सोचा कि रामदास सूखी रोटियां लाया होगा, उसे नाहक़ अपने पराठे और लड्डू क्यों दिये जाय? इसी तरह रामदास ने सोचा कि गोविंद दही-भात लाया होगा, उसे नाहक़ घी की बनी पूडियां और जलेबियां क्यों दी जायें?

भूख से उनकी आँखें चकरा रही थी फिर भी दोनों खाने की फिक्र किये बिना शाम तक चलते रहें। शाम को जब अंधेरा फैल गया तब रास्ते के किनारे एक उजड़े मंदिर को देख वहाँ पहुँचे और वहाँ पर दोनों आराम करने लगे। मगर दोनों को भूख के मारे नींद न आयी। दोनों ने



अपने मन में यही सोचा कि कोई सो जायगा, तो दूसरा खाना खा लेगा। लेकिन चोर-चोर मौसेरे भाई ठहरे। इसलिए रात भर जागते ही रह गये। इस वजह से दोनों इतने कमज़ोर हो गये कि सवेरा होने पर चल नहीं पाये।

गोविंद ने अपने पराठे और लड्डुओं की पोटली की ओर आशा भरी दृष्टि से देखा तो उसमें से क़तार बाँधकर बाहर निकलने वाली चींटियाँ दिखायी दीं। गोविंद का क्रोध भड़क उठा। उसकी आँखें लाल हो गयीं। वह दांत पीसने लगा।

"क्यों भाई गोविंद, क्या बात है? तुम बहुत ही नाराज मालूम होते हो? [illegible] रामदास ने गोविंद से पूछा।

"देखा, मेरी औरत ने क्या किया है? पराठे और लड्डुओं के साथ चींटियों को मिलाकर पोटली बाँध रखी है?" यों कहते गोविंद ने पोटली खोल दी। पराठे सड़ गये थे। और उनमें चींटियों के क़तार लगे थे।

गोविंद ने उस पोटली को दूर फेंकते हुए कहा–"मेरी पत्नी बड़ी जालिम औरत मालूम होती है, घर पहुँच जाऊँ तो उसकी हड्डियाँ तोड़ दूंगा। उसने मेरे साथ दगा किया है।"

गोविंद का यह हाल देख रामदास ने जल्दी-जल्दी अपनी पोटली खोल दी। पर आश्चर्य की बात यह थी कि उसमें भी चींटियों के क़तार लगे थे और जलेबी से बदबू निकल रही थी।

इसे देख रामदास ने कहा–"गोविंद, देखते हो न? मेरी पत्नी ने भी मेरे साथ दगा दिया है। हमें जल्दी घर लौटकर अपनी अपनी औरत को अच्छा सबक़ सिखाना होगा।"

गोविंद भी रामदास की बातों से सहमत हो गया। इसके बाद दोनों वापस घर लौटे। घर पहुँचते ही दोनों ने अपनी अपनी पत्नी को खूब पीटा। लेकिन उन औरतों ने [illegible] बेवकूफ़ी को अच्छी तरह से समझ लिया।

वे दोनों मित्र फिर एक बार अच्छा मुहूर्त व शकुन देखकर काशी के लिए रवाना हुए। यह बात मालूम होते ही उनकी पत्नियों ने पहले ही आपस में चर्चा करके निर्णय कर लिया कि इस बार उनको अच्छा सबक़ सिखाकर काशी जाने से रोक देना चाहिए। इसके लिए दोनों ने उचित उपाय भी सोचा।

जब गोविंद और रामदास काशी के लिए रवाना हुए तब उन्हें खाने की पोटलियाँ देते हुए उनकी पत्नियाँ अपने अपने पतियों से बोलीं–"काशी की यात्रा करनेवालों को रास्ते भर में दान-धर्म करना चाहिए, वरना तीर्थाटन का कोई अच्छा फल नहीं होता।"

दोनों मित्र एक शुभ मुहूर्त में घर से चल पड़े। दुपहर तक चलकर खाने के लिए एक पेड़ की छाया में जा बैठे। इस बार दोनों ने अपने दिल में किसी प्रकार के मैल के अपनी अपनी पोटलियाँ खोल दीं। दोनों की पोटलियों में पराठे ही थे, फिर भी गोविंद ने अपने कुछ पराठे रामदास को दिये और रामदास के देने पर उसके पराठे ले लिये।

रामदास का दिया हुआ पराठा मुंह में रखते ही गोविंद की जीभ जल गयी, उसी वक़्त रामदास गोविंद के दिये हुए पराठे खाकर कै करने लगा।



रामदास के पराठों में मिर्च ज्यादा पड़े थे और नमक बिलकुल न था।

गोविंद के पराठों में नमक ही नमक था और मिर्च बिलकुल न थे। गोविंद "मिर्च मिर्च" चिल्लाते रामदास पर टूट पड़ा। रामदास 'नमक, नमक' चिल्लाते गोविंद को मारने दौड़ा। दोनों में मार-पीट होने लगी। तब उस रास्ते चलनेवाले एक बुजुर्ग ने उनको रोका और पूछा–"तुम दोनों लड़ते क्यों हो?"

"महाशय, हम दोनों इस बात की शपथ लेने के लिए काशी जा रहे हैं कि जिन्दगी भर हम दोनों प्राण-मित्र बनकर रहेंगे। दोनों घर से खाने की चीजें साथ लाये। भूख लगते ही दोनों ने अपनी अपनी पोटली खोल दी। आप ही देखिये कि मुझे खाने के लिए उसने कैसी चीज़ दी है! क्या एक मित्र दूसरे मित्र के साथ ऐसा अन्याय कर सकता है?" इस तरह दोनों ने एक दूसरे की शिकायत की।

[illegible] अपनी अपनी चीज़ें मेरे हाथ दो।" यों कहते उस बुजुर्ग ने दोनों की दी हुई चीज़ें लेकर थोड़ा-थोड़ा चखकर देखा और कहा–"अरे, इनमें मुझे कोई खराबी दिखाई नहीं देती। लेकिन बात यह है कि इन दोनों चीज़ों को मिलाकर खाना होगा। बस, यही बात! अरे पगले! दोस्ती की भी यही बात है! दोनों के हृदय मिलने चाहिए। ऐसा न होकर भगवान के सामने शपथ लेने से क्या फ़ायदा? लगता है कि तुम लोगों से तुम्हरी पत्नियाँ ज्यादा अक्लमंद हैं! उन्होंने तुम लोगों को जो सबक़ सिखाया, वह तुम लोगों की खोपड़ी में आ बैठे तो तुम दोनों अच्छे मित्र बने रह सकते हैं!"

बुजुर्ग की बातें सुनने पर गोविंद और रामदास अपनी अपनी मूर्खता पर शर्मिंदा हुए। इसके बाद काशी की यात्रा करने का विचार त्याग कर अपने अपने घर लौटे और मित्रतापूर्वक रहने लगे।





उडन खटोला

[५]

शहजादी षम्स ने देखा कि फ़ारस का पंडित उसे शाहजादे कमर के पास न ले जाकर कहीं और ले जा रहा है, तब उसने बूढ़े पंडित से पूछा–"तुम्हारे मालिक ने तुम से क्या बताया? और तुम यह क्या कर रहे हो?"

बूढ़े ने हंसकर कहा–"मेरा मालिक? कौन है मेरा मालिक? क्या तुम कमरल आक्मार के बारे में तो नहीं कह रही हो? वह एक दम बेहूदा लड़का है।"

"अरे दुष्ट! तुम अपने मालिक के बारे में ऐसी भद्दी बातें कहते हो?" षम्स अल नहर ने पूछा।

"वह मेरा मालिक नहीं है। क्या तुम जानती हो कि मैं कौन हूँ?" बूढ़े ने कहा।

"मैं क्या जानूं! तुम कौन हो?" शहजादी ने कहा।

"तुम्हें और उसे धोखा देने के लिए मैं झूठ बोला था। उसने मेरे इस घोड़े को हड़प कर मुझे असहनीय दुख पहुँचाया है। मेरा घोड़ा मुझे वापस मिल गया है। अब उसे कुढ़कर मर जाने दो। तुम चिंता मत करो। उस कमबख्त से मैं सब प्रकार से योग्य हूँ। शक्तिशाली हूँ, धनी हूँ, दाता हूँ। मेरे गुलाम और नौकर भी तुम्हारी सेवा ऐसे ही करेंगे, जैसे मेरी सेवा करते हैं। मैं तुम्हें ऐसे ऐसे आभूषण और वस्त्र दूंगा जो कोई भी राजा तुम्हें नहीं दे सकता। तुम्हारी हर इच्छा की पूर्ति करूँगा।" बूढ़े ने कहा।

शहजादी अपना सर पीटकर रोते हुये बोली–"यह मेरी बदक़िस्मती है कि मैं अपने माँ-बाप से तो दूर हो गयी, फिर अपने प्रियतम से भी दूर हो रही हूँ!"



बूढ़े ने घोड़े को तुर्किस्तान की ओर बढ़ाया। चन्द घंटों में जादू का वह घोड़ा तुर्किस्तान के एक महा नगर के बाहर मैदान में जा उतरा। उस मैदान में सुंदर पेड़ और झरने थे।

उस महा नगर का शासक उस दिन उस मैदान में सैर करने आया और टहलते हुए ठण्डी हवा का सेवन कर रहा था। उसने बूढ़े, युवती और जादू के घोड़े को देखा और अपने गुलामों को उन्हें पकड़ लाने का आदेश दिया। उन लोगों ने अचानक बूढ़े पर हमला किया, उसे बंदी बनाकर शहजादी और जादू के घोड़े को लाकर सुलतान के सामने रखा।

बूढ़े का विकृत रूप देख सुलतान का चेहरा घृणा से भर उठा। सुलतान ने शहजादी से पूछा–"सुंदरी, तुमको इस विकृत व्यक्ति के गले मढ़नेवाले तुम्हारे माँ-बाप कैसे क्रूर होंगे?"

"यह युवती मेरी औरत ही नहीं बल्कि निकट की रिश्तेदारिन भी है।" बूढ़े ने तुरंत सुलतान से कहा।

इसपर शहजादी ने व्यग्र स्वर में कहा–"जहाँपनाह, अल्लाह की क़सम! मैं सौ साल के इस बूढ़े को जानती तक नहीं हूँ। यह मेरा शौहर नहीं है। कोई जादूगर है। झूठ बोलकर, दगा देकर जबर्दस्ती यह मुझे उठा लाया है।"

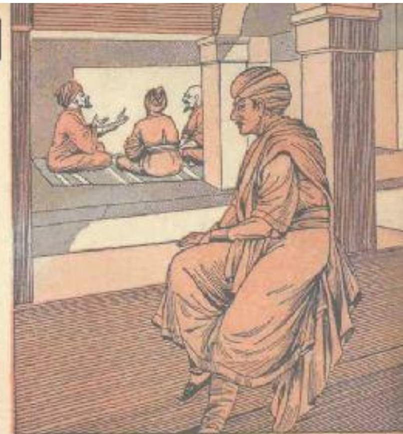
यह बात सुनते ही सुलतान ने उस बूढ़े को पीटने का अपने गुलामों को आदेश दिया। गुलामों ने उसे पीटकर अधमरा बना दिया। इसके बाद सुलतान ने बूढ़े को नगर में ले जाकर अंधेरी कोठी में बन्दी बनाया। तब उस जादू के घोड़े और शहजादी को ले सुलतान राजमहल में पहुँचा। मगर सुलतान उस जादू के घोड़े के रहस्य को नहीं जान पाया।

अपनी प्रेयसी को खोकर शहजादा कमर यात्री की पोशाकें पहने आवश्यक खाद्य-पदार्थ साथ ले शहजादी की खोज में चल पड़ा। वह अनेक देशों को पार करते

जो भी दिखाई देता, उनसे यही सवाल करता–"क्या तुम लोगों ने जादू के घोड़ो को देखा है?" वे लोग यही सोचते कि यह युवक पागल हो गया है।

बड़ी मुश्किल से कई महीने बीत गये। शहजादा कमर बड़ी सब्रता के साथ सबसे शहजादी का दरियाफ़्त करता गया। मगर किसी ने उसे शहजादी के बारे में सही समाचार नहीं दिया। आख़िर कमर अपने मामा के नगर सना में पहुँचा। वहाँ पर भी उसे षम्स का पता न लगा। उल्टे शहजादी के बाप को परेशान देख वह भी दुख में डूब गया। वहाँ से आगे बढ़कर आख़िर कमर तुर्किस्तान में जा पहुँचा।

वह एक सराय में ठहरा था। एक दिन कुछ सौदागर आपस में कोई बातचीत कर रहे थे। उनके समीप में बैठे कमर के कान में एक विचित्र ख़बर पड़ी। एक सौदागर दूसरे सौदागरों से कह रहा था–"मैंने अमुक नगर में एक समाचार सुना है। राजा ने एक मैदान में सैर करने जाकर एक बूढ़े और उसके साथ एक सुंदर युवती को देखा। उनके साथ हाथी दांत और बढ़िया लकड़ी से बनाया गया एक घोड़ा भी था..." यों उसने वह सारी कहानी सुनायी जो उसने सुनी थी।



कमर को जिस समाचार की जरूरत थी, बहुत दिन बाद वह समाचार मिला। उसने उन लोगों के द्वारा उस नगर को दिशा का पता लगाया और शीघ्र गति से उस ओर बढ़ा। वह उस नगर में पहुँच कर नगर का द्वार पार कर ही रहा था, सिपाहियों ने उसे पकड़ लिया और उसे सुलतान के सामने हाजिर करना चाहा। क्यों कि उस देश का यह रिवाज था कि कोई विदेशी उस नगर में प्रवेश करता है, तो सुलतान उसका पूरा ससाचार जान लेता था।

लेकिन अंधेरा हो चला था, इसलिए उस रात को सिपाहियों ने कमर को



कारागार में रखा। उसे खाना दिया। तब सिपाहियों ने पूछा–"तुम किस देश से आ रहे हो?" कमर ने जवाब दिया कि वह फ़ारस से आ रहा है।

इसपर सिपाहियों ने हँसकर कहा–"तुम्हारे देश का एक व्यक्ति यहाँ पर आया हुआ है। ऐसे झूठ बोलनेवाले को हमने कहीं नहीं देखा। देखने में वह बड़ा ही भद्दा और कुरूप लगता है। वह कहता है कि बड़ा ज्ञानी और मशहूर वैद्य है। हमारे सुलतान ने एक मैदान में उस बूढ़े, एक युवती और हाथी दांत से निर्मित एक घोड़े को देखा है। वह युवती अचानक पागल हो गयी है। वरना हमारे

[illegible] लिए हमारे सुलतान ने कई हकीम और वैद्यों को बुला भेजा है। काफी धन भी खर्च किया है। वह बूढ़ा सचमुच वैद्य होता तो क्या उस युवती का इलाज नहीं कर सकता था? हाथी दांत के घोड़े को सुलतान ने खज़ाने में रखवा दिया है। बूढ़ा जेलखाने में है। वह रात भर कराहता है। हमें सोने नहीं देता।"

कमर ने तब सोचा कि वह सही जगह पहुँच गया है। रात में उसे एक कोठी में सिपाहियों ने बंद किया। उस कमरे में पहुँचते ही कमर ने सुना कि कोई फ़ारसी में बड़बड़ा रहा है।

"ओह! मैं इससे बढ़िया उपाय सोच नहीं पाया! वह प्यारी युवती मेरे हाथ से निकल गयी है! मैं लोभ में आ गया।"

ये बातें सुनने पर कमर ने भांप लिया कि विलाप करनेवाला व्यक्ति जरूर ही फ़ारस का पंडित होगा। उसने फ़ारसी में ही उस व्यक्ति से पूछा–"तुम रोते क्यों हो? क्या तुम यह मानते हो कि संसार में तुमसे बढ़कर अभागा कोई नहीं है?"

बूढ़े को लगा कि मानों उसकी जान में जान आयी हो! उसने कमर को अपनी सारी कहानी सुना कर अपने दिल को

[illegible] कमर को नहीं पहचाना। रात भर वे दोनों सच्चे मित्र की भांति वार्तालाप करते रहे।

दूसरे दिन सवेरे सिपाही कमरल अक्मार को सुलतान के पास ले गये और निवेदन किया–"हुज़ूर! यह युवक कल बड़ी रात गये नगर में आया। इसलिए हम उसी वक़्त आपकी सेवा में हाज़िर नहीं कर सके।"

"तुम कहाँ से आते हो? तुम्हारा नाम क्या है? तुम्हारा पेशा क्या है? हमारे देश में किस काम से आये हो?" सुलतान ने पूछा।

"मुझे हर्जा कहते हैं। मैं फ़ारस का बाशिंदा हूँ। मेरा पेशा इलाज करने का है। खासकर मैं पागलों का अच्छा इलाज करता हूँ। सारे देश घूमते हुए इलाज करने में अनुभव प्राप्त करता हूँ। बड़ी बड़ी पगड़ियाँ बांधना, गले में मालाएँ धारण करना, बड़ी बड़ी पोथियाँ बगल में दाब कर ढोंग रचना मैं पसंद नहीं करता हूँ। मंत्र-तंत्र किये बिना ही मैं इलाज करता हूँ।" कमर ने समझाया।

इस पर सुलतान बड़ा खुश हुआ और बोला–"तुम ठीक वक़्त पर आये हो। हमारे यहाँ एक युवती बावली हो गयी



है। उसका पागलपन दूर करोगे तो तुम्हें मुँह मांगी मुराद मिलेगी।"

"अल्लाह हुज़ूर पर मेहरबान रहे! पहले आप मुझे यह बताइये कि वह युवती कैसे बावली हो गयी? कितने दिनों से वह पागल है! साथ ही उस बूढ़े और घोड़ा का भी पूरा हाल बतला दीजिये।" कमर ने पूछा।

सुलतान ने प्रारंभ से सारी कहानी सुना कर कहा–"मैंने बूढ़े को कोठी में बंद करवाया है। घोड़े को खजाने में सुरक्षित रखवाया है।"

कमर के मन में एक बार घोड़े को देखने की इच्छा हुई। यदि वह अच्छी

हालत में रहा तो उसका काम ज्यादा सरल होगा। अगर जोड़ों में कहीं तोड़-फोड़ हो गयी हो तो उसे अपनी प्रेयसी की रक्षा के लिए कोई दूसरा उपाय सोचना होगा।

ये सारी बातें सोचकर कमर ने सुलतान से कहा–"मुझे एक बार उस घोड़े की जाँच करनी होगी। इससे इलाज करने में बड़ी सहूलियत होगी।"

"ऐसा ही करेंगे।" यों कहकर सुलतान कमर को खजाने के पास ले गया। कमर ने उसकी जाँच करके जान लिया कि घोड़े के सभी यंत्र अच्छी हालत में हैं, तब खुशी में आकर बोला–"अब मैं उस युवती की जाँच करके उसकी बीमारी का इ[illegible] की मेहर्बानी हो तो मैं उस युवती की बीमारी को दूर कर सकता हूँ। इसके लिए उस घोड़े की ज़रूरत पड़ेगी। इसलिए आपके सिपाहियों को चाहिए कि वे इस घोड़े की अच्छी तरह से हिफ़ाज़त करें।"

इसके बाद सुलतान कमर को उस युवती के कमरे में ले गया। वहाँ पर वह युवती छाती पीटते, कपड़े फाड़ते दिखाई दी। कमर ने अंदाज़ लगाया कि सचमुच वह युवती पागल नहीं है, बल्कि वह पागल हो जाने का अभिनय कर रही है।

कमर ने शहजादी के निकट जाकर कहा–"शहजादीजी, तुम्हारी सभी तकलीफ़ें दूर हो जायें!"

[illegible] लिया। वह ज़ोर से चिल्ला पड़ी और बेहोश होकर गिर पड़ी। सुलतान ने सोचा कि हकीम को देख डर के मारे वह युवती बेहोश हो गयी है! कमर उस युवती को होश में लाया, तब गुप्तरूप से उसके कानों में कहा–"तुम थोड़ा सब्र करो। हम दोनों खतरे में हैं। सुलतान के सामने ऐसा अभिनय करो कि पिशाच ने तुम्हें छोड़ दिया है।"

शहजादी ने भी गुप्त रूप से कहा–"अच्छी बात है!"

तब कमर दूर पर खड़े सुलतान के निकट जाकर बोला–"हुज़ूर! आपकी मेहर्बानी से इस युवती की बीमारी का ठीक से पता लगाया और उसका इलाज भी कर दिया है। आप उसके पास जाकर स्नेह से परामर्श कीजिये। साथ ही आप उसकी जिन जिन इच्छाओं की पूर्ति करना चाहते हैं, उन्हें पूरा करने का आश्वासन भी दीजिये। इसके बाद सब कुछ आपके अनुकूल होगा।"

सुलतान शहजादी के निकट पहुँचा। शहजादी ने उठकर सुलतान को सलाम करके कहा–"आपके आगमन से मैं धन्य हो गयी हूँ।"

उस युवती में ऐसा परिवर्तन देख सुलतान खुशी के मारे फूला न समाया। उसने अपनी गुलाम औरतों और खोजाओं को तुरंत आदेश दिया कि





शाहज़ादी को स्नानागार में ले जाकर नहलवाये और उसे क़ीमती वस्त्र तथा आभूषण पहना दे। गुलाम औरतों ने ऐसा ही किया।

इसके बाद सुलतान ने कमर से कहा– "हकीम साहब, तुमने हमारा बड़ा उपकार किया। अल्लाह की मेहर्बानी तुम पर हमेशा बनी रहे।"

"हुज़ूर! यदि यह खुशी आप हमेशा के लिए चाहे तो आपको चाहिए कि आप इस सुंदरी और घोड़े को साथ ले अपने परिवार सहित उस प्रदेश में पहुँचे, जहाँ आपको ये दोनों प्राप्त हुए थे। असली बात यह है कि वह घोड़ा एक

करके इसे पागल बना दिया है। मैं उस प्रदेश में शैतान को भगाने का यत्न करूँगा। वरना वह शैतान फिर से उसमें प्रवेश कर सकता है। अलावा इसके हर महीने के प्रारंभ में शैतान इस सुंदरी में प्रवेश करता रहेगा और हर बार उसे भगाना पड़ेगा। इसलिए उस शैतान का हमेशा के लिए अंत करना उचित होगा।" कमर ने समझाया।

"यह कौन मुश्किल की बात है? ऐसा ही करेंगे।" सुलतान ने कहा।

इस पर सुलतान अपने दरबारियों, नौकरों, कमर, शहज़ादी तथा घोड़े को भी साथ ले उसी वक़्त मैदान की ओर चल पड़ा।

मैदान में पहुँचते ही कमर ने उड़न खटोले को बहुत दूर ले जाकर रखा। उस पर शहज़ादी को चढ़ाया। तब कहा– "हुज़ूर का हुक्म हो तो मैं भी इस घोड़े पर सवार हो शैतान के द्वारा इस घोड़े को आप तक चलाऊँगा।"

"वाह, कैसा अद्भुत है!" सुलतान ने मन में सोचा।

कमर भी उड़न खटोले पर बैठ गया। अपने पीछे बैठी शहज़ादी को रस्सी से कसकर बाँध दिया। तब घुंडी दबायी।

में उड़ा और अदृश्य हो गया।

सुलतान समझ न पाया कि क्या हो गया है। वह इस विचार से दुपहर तक अपने परिवार के साथ वहीं रहा कि वह सुंदरी और वैद्य लौट आयेंगे। इसके बाद वह अपने परिवार को ले राजमहल लौट आया, वहाँ पर भी उसने शहज़ादी तथा वैद्य का इंतज़ार किया; पर उन दोनों का कहीं पता ही न था।

इतने में उसे बूढ़े क़ैदी का स्मरण आया तब बूढ़े को बुलाकर डाँटा–"अरे बदमाश! तुमने मुझ से यह बात क्यों छिपायी कि उस घोड़े के अन्दर पिशाच है। अब वह पिशाच हकीम और अद्भुत सुंदरी को भी उड़ाकर कहीं ले गया है। बेचारे, उन पर न मालूम, क्या बीतेगा? इस अपराध पर अभी मैं तुम्हारा सर उड़वा दूँगा।" सुलतान का आदेश मिलते ही उसके गुलामों ने बूढ़े के सर को धड़ से अलग कर डाला।

उड़न खटोले पर कमर शहज़ादी के साथ सकुशल अपने नगर को लौटा और राजमहल के छत पर जा उतरा। शोक सागर में डूबा हुआ सुलतान का परिवार खुशी से भर उठा। इसके बाद सुलतान साबूर ने अपने पुत्र के विवाह के संदर्भ में अनेक दिन तक उत्सव मनाये। भविष्य में कोई खतरा नहो, इस ख़्याल से साबूर ने खुद अपने हाथों से उड़न खटोले को तोड़ दिया।

कमर ने अपने ससुर को सारा समाचार सूचित करते हुए चिट्ठी लिख दी और अनेक पुरस्कारों के साथ उस चिट्ठी को दूतों के द्वारा उसके पास भिजवा दिया।

कुछ समय बाद सुलतान साबूर का देहांत हो गया, तब कमर सुलतान बन बैठा। गद्दी पर बैठते ही कमर ने अपनी छोटी बहन की शादी अपने साले के साथ कर दी। इसके बाद कमर और षम्स अल नहर सुखपूर्वक अपने दिन बिताने लगे।

(समाप्त)



कंजूस

एक गाँव में एक अमीर था। वह अव्वल दर्जे का कंजूस था। न पेट भर खाना खाता था और तन पर पर्याप्त कपड़ा ही पहनता था।

एक दिन त्यौहार पड़ा। घर के नौकर ने अपने मालिक के तन पर पुराने कपड़े देख पूछा–"मालिक, आज त्यौहार का दिन है। पुराने कपड़े क्यों पहने हैं? नये कपड़ क्यों नहीं पहन लेते?"

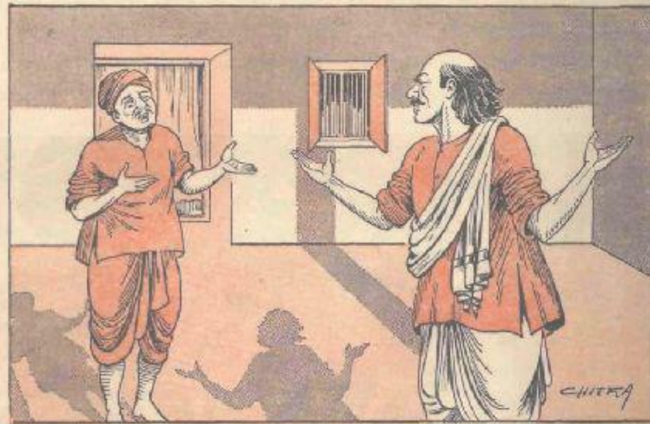
"अरे सोमू, इस गाँव में मुझे कौन नहीं जानता? मैं नये कपड़े न पहनूं तो भी कोई बात नहीं।" अमीर ने जवाब दिया।

नौकर ने सोचा कि उसका मालिक एक नंबर का कंजूस है और वह मौन रह गया।

कुछ दिन बीत गये। एक दिन अमीर पड़ोसी गाँव में जाते हुए नौकर से बोला–"सोमू, मैं गाँव हो आता हूँ। घर की देखभाल अच्छी तरह से करना।"

"मालिक, दूसरे गाँव में जाते वक्त भी पुराने कपड़े पहनकर क्यों जाते हैं?" नौकर ने पूछा।

"अरे पगले! वहाँ पर मुझे जानता ही कौन है! चाहे मैं जो भी कपड़े पहनूँ, बराबर है।" अमीर ने कहा।





चन्द्रभानु

खत्रपुर पर राजा उदयभानु राज्य करता था। उसकी पत्नी का नाम रूपमती था। उस दंपति के बहुत समय तक कोई संतान न हुई। संतान के वास्ते उस दंपति ने अनेक उपवास किये, देवताओं की पूजा की, साधु-सन्यासियों की सेवा की, मगर उन्हें कोई संतान न हुई।

आखिर लाचार होकर राजा उदयभानु ने अपनी चालीस साल की अधेड़ उम्र में लावण्या नामक एक सुंदरी के साथ दूसरा विवाह किया। लावण्या के सौंदर्य पर मुग्ध हो राजा अपना सारा समय उसी के साथ बिताने लगा, बड़ी रानी रूपमती के पास महीने में सिर्फ़ दो तीन बार जाया करता था।

राजा के लावण्या के साथ विवाह किये दो साल बीत गये, मगर लावण्या के कोई संतान न हुई। पर इसी बीच बड़ी रानी किन्हीं जड़ी बूटियों की मदद से गर्भवती हुई और उसने एक सुंदर पुत्र का जन्म दिया। राजा इस पर बड़ा प्रसन्न हुआ और उस शिशु का नामकरण चन्द्रभानु किया। रूपमती ने सोचा कि उसके दिन फिर गये हैं।

मगर बात ऐसी न हुई। क्योंकि लावण्या ने राजा को अपना दास बना लिया था। इसलिए राजा उसकी हर बात का पालन करता था। उसकी इच्छा के विरुद्ध कुछ भी नहीं कर पाता था।

लावण्या रूपमती से ईर्ष्या करती थी, इस कारण उसने राजा को समझाया कि रूपमती कोई जादूगरनी है और उसने मंत्र और तंत्रों की मदद से पुत्र का जन्म दिया है। लड़का बड़ा होने पर राज्य के लिए खतरा बन सकता है! जिस राजा ने संतान के वास्ते अनेक जप-तप किये,

कंजूस

एक गाँव में एक अमीर था। वह अव्वल दर्जे का कंजूस था। न पेट भर खाना खाता था और तन पर पर्याप्त कपड़ा ही पहनता था।

एक दिन त्यौहार पड़ा। घर के नौकर ने अपने मालिक के तन पर पुराने कपड़े देख पूछा–"मालिक, आज त्यौहार का दिन है। पुराने कपड़े क्यों पहने हैं? नये कपड़ क्यों नहीं पहन लेते?"

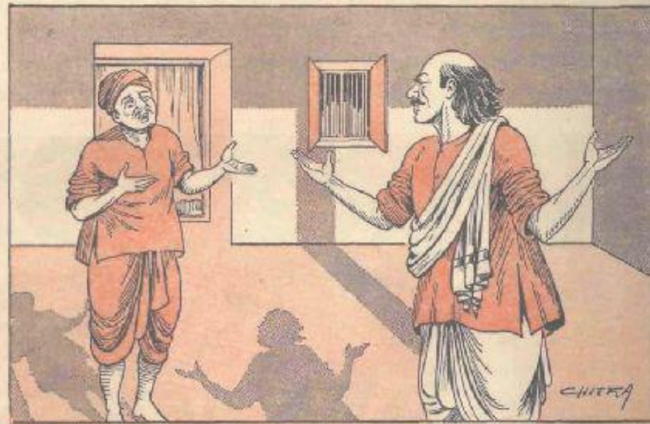
"अरे सोमू, इस गाँव में मुझे कौन नहीं जानता? मैं नये कपड़े न पहनूं तो भी कोई बात नहीं।" अमीर ने जवाब दिया।

नौकर ने सोचा कि उसका मालिक एक नंबर का कंजूस है और वह मौन रह गया।

कुछ दिन बीत गये। एक दिन अमीर पड़ोसी गाँव में जाते हुए नौकर से बोला–"सोमू, मैं गाँव हो आता हूँ। घर की देखभाल अच्छी तरह से करना।"

"मालिक, दूसरे गाँव में जाते वक्त भी पुराने कपड़े पहनकर क्यों जाते हैं?" नौकर ने पूछा।

"अरे पगले! यहाँ पर मुझे जानता ही कौन है! चाहे मैं जो भी कपड़े पहनूँ, बराबर है।" अमीर ने कहा।





चन्द्रभानु

खत्रपुर पर राजा उदयभानु राज्य करता था। उसकी पत्नी का नाम रूपमती था। उस दंपति के बहुत समय तक कोई संतान न हुई। संतान के वास्ते उस दंपति ने अनेक उपवास किये, देवताओं की पूजा की, साधु-सन्यासियों की सेवा की, मगर उन्हें कोई संतान न हुई।

आखिर लाचार होकर राजा उदयभानु ने अपनी चालीस साल की अधेड़ उम्र में लावण्या नामक एक सुंदरी के साथ दूसरा विवाह किया। लावण्या के सौंदर्य पर मुग्ध हो राजा अपना सारा समय उसी के साथ बिताने लगा, बड़ी रानी रूपमती के पास महीने में सिर्फ़ दो तीन बार जाया करता था।

राजा के लावण्या के साथ विवाह किये दो साल बीत गये, मगर लावण्या के कोई संतान न हुई। पर इसी बीच बड़ी रानी किन्हीं जड़ी बूटियों की मदद से गर्भवती हुई और उसने एक सुंदर पुत्र का जन्म दिया। राजा इस पर बड़ा प्रसन्न हुआ और उस शिशु का नामकरण चन्द्रभानु किया। रूपमती ने सोचा कि उसके दिन फिर गये हैं।

मगर बात ऐसी न हुई। क्योंकि लावण्या ने राजा को अपना दास बना लिया था। इसलिए राजा उसकी हर बात का पालन करता था। उसकी इच्छा के विरुद्ध कुछ भी नहीं कर पाता था।

लावण्या रूपमती से ईर्ष्या करती थी, इस कारण उसने राजा को समझाया कि रूपमती कोई जादूगरनी है और उसने मंत्र और तंत्रों की मदद से पुत्र का जन्म दिया है। लड़का बड़ा होने पर राज्य के लिए खतरा बन सकता है! जिस राजा ने संतान के वास्ते अनेक जप-तप किये,



वही राजा लावण्या के मायाजाल में फंस कर चन्द्रभानु को जंगलों में भेजने लिए राजी हो गया।

आठ महीने के शिशु चन्द्रभानु को जंगल में छोड़ आने का काम सत्पाल नामक एक सेवक को सौंप दिया गया। सत्पाल उस शिशु को लेकर जंगल की ओर चल पड़ा। मगर वह सीधे जंगल में न गया, बल्कि पडोसी राज्य सात्पुरी में जाकर वहां रहनेवाले अपने मित्र जादूपति के घर पहुँचा। जादूपति जादूगरी जानता था। उसने चन्द्रभानु को पाल-पोसकर बड़ा करने की जिम्मेदारी अपने ऊपर ली। सत्पाल ने अपने राज्य को लौटकर राजा को बताया कि वह चन्द्रभानु को जंगलों में छोड़ आया है।

महीने और साल बीत गये, पर राजा उदयभानु के फिर कोई संतान न हुई। लावण्या के प्रोत्साहन पर लावण्या के भतीजे महावीर को राजा ने अपना दत्तपुत्र बना लिया।

उदयभानु की उम्र बढ़ती गयी, फिर भी वह लावण्या पर आसाक्त था। इसका नाजायज फ़ायदा उठाकर लावण्या राज-काज के काम खुद देखने लगी। उसने आदेश दिया कि बड़ी रानी को नौकरों वाले कमरे में निवास करना है और उसे एक दासी की तरह ज़िंदगी बितानी है। दिन प्रति दिन उसकी क्रूरता बढ़ती गयी। जनता उससे तंग आकर उसके साथ द्वेष करने लगी। उसके कारण जनता को कोई सुख और संतोष न था।

अचानक एक दिन लावण्या ने राजा पर दबाव डाला कि उसके सारे अधिकार लावण्या को सौंप दे। इससे राजा की आँखें खुल गयीं। उसने समझ लिया कि वह आज तक गलत रास्ते पर था। फिर भी उसे लाचार हो सारे अधिकार लावण्या को सौंप देने पड़े। राजा के सभी अधिकार अपने हाथ में आते ही लावण्या ने राजा को भी सेवकों के साथ मिलाया।

इस तरह काफी समय बाद राजा उदयभानु और रूपमती एक ही प्रकार की ज़िंदगी के सहभागी हुए। उदयभानु को सदा इस बात की चिंता सताने लगी कि उसने जान-बूझकर अपने पुत्र को जंगलों में पहुँचा दिया है। रूपमती अपने पति के कष्टों में हाथ बंटाते उसकी सेवा करने लगी। इस तरह चन्द्रभानु के जन्म के सोलह साल बाद रूपमती ने गर्भवती हो एक पुत्री का जन्म दिया। तब तक चन्द्रभानु जादूमति के घर पलते सोलह साल का हो गया था। उसने अन्य विद्याओं के साथ जादुगरी भी सीख ली। अब वह देखने में सुंदर, होशियार और बलवान लगता था।

एक दिन अच्छा मुहूर्त देख चन्द्रभानु जादूपति को साथ ले लावण्या के दरबार में आया और उसने घोषणा की–"मै चन्द्रभानु हूँ और इस राज्य का वारिस हूँ।"

लावण्या ने चकित हो पूछा–"वह तो कभी जंगलों में खूँखार जानवरों का शिकार बन गया है। दुष्ट, तुम अपने को राजकुमार बताते हो? यहाँ से चले जाओ।"

"मैं एक बार राजा के दर्शन करना चाहता हूँ।" चन्द्रभानु ने पूछा।

"राजा तो वृद्ध हैं, बीमार हैं। वे दरबार में नहीं आ सकते।" लावण्या ने उत्तर दिया।



"मैं अपनी माताजी को देखना चाहता हूँ।" चन्द्रभानु ने फिर पूछा।

"तुम्हारी कोई माता भी है यहाँ? यह तुम्हारी कैसी हिम्मत? धोखा देने के अपराध में मैं तुम्हें फाँसी पर चढ़ा सकता हूँ।" यों लावण्या ने उसे धमकी दी। वह अपने सिपाहियों को संकेत कर ही रही थी कि चन्द्रभानु को गिरफ़्तार करे, तभी वह तीव्र गति के साथ बाहर चला गया।

उस राज्य की जनता लावण्या के शासन से ऊब चुकी थी। राजा उदयभानु तथा उसके पालित पुत्र के प्रति भी जनता की कोई सद्भावना न रही। दरबार के प्रमुख व्यक्तियों ने जब चन्द्रभानु के मुँह से यह



घोषणा सुनी कि वही राजगद्दी का वारिस है, तब उनका उत्साह उमड़ पड़ा।

चन्द्रभानु ने नगर के प्रमुख व्यक्तियों से मिलकर उन्हें अपना सारा वृत्तांत सुनाया, तब उन लोगों ने चन्द्रभानु से कहा–"युवराज, तुम हमें इस दुष्ट शासिका से उबारो, हमारा समर्थन तुम्हें प्राप्त होगा।"

उन सब को साथ ले चन्द्रभानु दूसरे दिन दरबार में पहुँचा। वह अपने साथ उन वस्त्रों को भी ले आया जो बचपन में जंगल में भेजते समय उसके शरीर पर पहनाये गये थे। उन वस्त्रों को लावण्या के सामने रखकर चन्द्रभानु ने कहा–"लीजिये, ये ही मेरे बचपन की पोशाकें हैं!"

उस शिशु को खूंखार जानवरों के खा जाने के बाद किसी ने इन पोशाकों को सुरक्षित रख लिया होगा।" लावण्या ने कहा। नगर के प्रमुख व्यक्तियों ने सलाह दी–"महारानी जी, यह जांच कर देख लीजिये, कहीं बूढ़े राजा और रानी इसे पहचान लें?"

राजा उदयभानु और रूपमती चन्द्रभानु को देख उसे पहचान नहीं पाये। इस पर लावण्या ने चन्द्रभानु से कहा–"अरे दगेबाज! तुम्हारी पोल खुल गयी है। अब तुम्हें मृत्यु दण्ड सुना रही हूँ।"

तब दूर बैठे जादूपति ने कहा–"जल्दबाजी करना उचित नहीं। दो व्यक्ति सही माँ और बेटे हैं कि नहीं, यह जानने के लिए एक प्रक्रिया है। माँ का दूध एक तालाब में एक छोर पर डाल कर, तालाब के दूसरे छोर से बेटा एक घड़े में पानी-भर दे, तब उस घड़े के पानी में माँ के दूध की धारा दिखाई देनी चाहिये। इसलिए इसकी जांच करने के लिए आप लोग रानी रूपमती का दूध तालाब के एक छोर में डलवा दीजिये, चन्द्रभानु से कहिये कि वह तालाब के दूसरे छोर घड़े में जल भर दे। यदि वे दोनों सचमुच माँ और बेटे हैं, तो माँ का दूध घड़े में अपने आप आ जायेंगे।"

[illegible] के कहे अनुसार होना असंभव है, इसलिए उसने उसके सुझाव को मान लिया। लेकिन उसने एक शर्त रखी–"यदि इस परीक्षा में यह युवक सफल न निकला तो उसे मृत्यु दण्ड दिया जायगा।"

"इसके लिए मैं तैयार हूँ।" चन्द्रभानु ने जवाब दिया।

इसके बाद परीक्षा के लिए आवश्यक सारी तैयारियाँ हो गयीं। दो दिन बाद राजमहल के तालाब के पास लोगों की भीड़ लग गयी। रानी रूपमती के दूध को तालाब के एक छोर पर डाला गया। दूसरे छोर पर चन्द्रभानु एक खाली घड़ा लेकर तालाब में उतरा। उसने उस घड़े को पानी से धोया और थोड़ी देर में पानी भर कर बाहर आया। उस पानी को दूध जैसा देख सब लोग विस्मय में आ गये।

नगर के प्रमुख व्यक्तियों ने यह निश्चय कर लिया कि चन्द्रभानु ही रानी रूपमती का पुत्र और गद्दी का वारिस है, तब लावण्या से कहा–"अब तुम गद्दी से उतर सकती हो। हम चन्द्रभानु का राज्याभिषेक करेंगे।" उनके निर्णय को लावण्या को भी स्वीकार करना पड़ा।

चन्द्रभानु ने घड़े में दूध कैसे भरवा दिया? उसने एक सफेद कपड़े के टुकड़े को बारह बार दूध में डुबोया, हर बार दूध के सूख जाने पर फिर डुबो करके उसे सुखाया और उस टुकड़े को अपनी कमर में खोंस लिया था। जब वह खाली घड़े को धोने का अभिनय करने लगा, तब उस टुकड़े को घड़े के पानी में डाल कर खूब हिलाया जिससे पानी में दूध का रंग आ गया। तब उस टुकड़े को पानी में डाल कर अपने पैर से मिट्टी में दबा दिया। इसके बाद घड़े में पानी भरने का अभिनय करके किनारे पर आ गया। सब ने सोचा कि तालाब के दूसरे छोर पर डाला गया दूध घड़े में आ गया है! इस तरह उसकी युक्ति सफल हो गयी।





कुत्तों का सौदा

पांच सौ साल पहले हंगेरी में मात्यास नामक एक धर्मात्मा राजा शासन करता था। उन दिनों में राजधानी से थोड़ी दूर पर एक गाँव में एक अमीर रहा करता था। दूसरों को बड़ी सरलता से धोखा देने की प्रवृत्ति उसकी जन्मजात प्रतिभा थी। झूठ बोलकर अपने मित्रों व परिचितों को दगा देता और वे लोग उसकी बातों में आकर धोखा खा जाते, तो वह बड़ा प्रसन्न होता। यह उसका नित्य का काम था।

एक बार वह अमीर राजधानी में गया। कोई सौदा करके थैली भर सोने के सिक्कों के साथ गाँव में लौट आया। वह गाँव के हर किसी से यही कहता गया कि उसने राजधानी में कुत्ते बेचकर इतना सारा सोना कमा लिया है और राजधानी में कुत्तों की बड़ी माँग है।

गाँव के एक गरीब आदमी ने यह बात किसी दूसरे के मुँह से सुनी, तो उसके मन में यह आशा पैदा हो गयी कि वह भी थोड़ा-बहुत सोना कमा ले, क्योंकि यह सौदा तो उसके लिए भारी न पड़ेगा। यह सोचकर वह गरीब अमीर के घर पहुँचा और पूछा—"साहब, मैंने अमुक बात सुनी है, क्या यह सच है?"

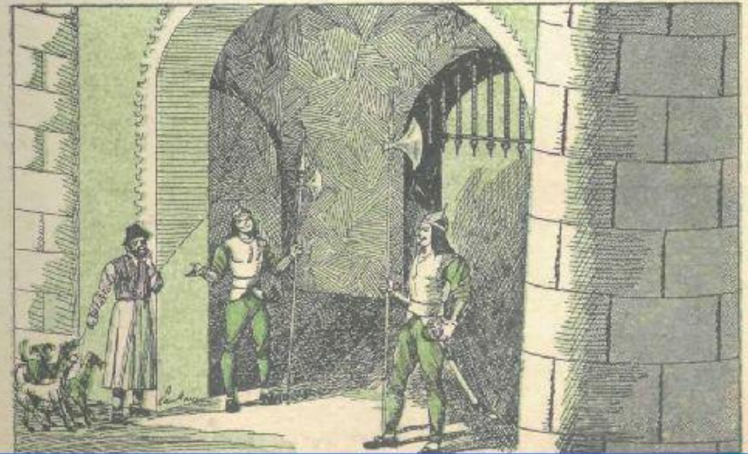
"हाँ, बे! बिलकुल सच है। राजा मात्यास अंधाधुंध कुत्तों को खरीदता जा रहा है। अच्छा भाव दे रहा है। यह बात मेरे कानों में पड़ते ही मैंने बिना किसी से कहे अपनी सारी पूँजी लगाकर कुत्ते खरीद लिये और राजधानी में ले जाकर राजा के हाथ अच्छे भाव पर बेच दिये। मुझे एक थैली-भर सोना हाथ लगा है। बेचारे, तुम गरीब हो! तुम भी राजा के हाथ कुत्ते बेच दो।" अमीर ने कहा।

[illegible] विश्वास किया। बेचारे उसके मन में भी धन कमाने का लोभ पैदा हो गया। मगर उसके पास पूँजी के नाम एक कौड़ी भी नहीं है। कोई चीज़ बेचकर भी धन इकट्ठा करना चाहे तो उसके पास सिवाय सूखकर कांटा बनी गाय के कुछ नहीं है। फिर भी वह ऐसे अच्छे मौक़े से हाथ धोना नहीं चाहता था, इसलिए अपनी उस कमज़ोर गाय को बेचकर थोड़े से कुत्ते खरीद लिये, उनके गले में रस्सियाँ बाँध राजधानी की ओर चल पड़ा।

गरीब राजमहल में पहुँचा, लेकिन पहरेदारों ने उसे भीतर जाने नहीं दिया। तब उसकी समझ में आया कि अमीर ने उसके साथ धोखा दिया है और उसे खूब बेवकूफ़ बनाया है। उसे देख जब पहरेदार हँसने लगे, तब बेचारे गरीब को रोना आया और वह रोने लगा।

राजमहल की छत पर से राजा ने देखा कि एक व्यक्ति अपने साथ कुत्ते लिए रो रहा है, राजा ने असली बात जाननी चाही, उसने अपने सेवक को आदेश दिया कि कुत्तों को साथ लानेवाले व्यक्ति को उसके सामने हाज़िर करे। गरीब ने राजा के सामने असली बात बता दी कि कैसे उसके गाँव के एक अमीर ने उसके साथ दगा दिया है।

राजा को उस गरीब पर बड़ी दया आयी। उसने गरीब से बताया कि यह



बात सच है कि वह कुत्ते खरीदता है । तब गरीब को एक सौ सोने के सिक्के दिलाकर कुत्तों को छुड़ाया और अमीर का नाम व पता जान लिया । इस पर गरीब की खुशी का कोई ठिकाना न रहा । उसने अपने गांव में जाकर सबको यह बात बतायी और सोने के सिक्के भी दिखाये ।

अमीर ने सोचा था कि वह गरीब उसकी बातों पर विश्वास करके सबके सामने बेवकूफ़ बन जायगा, मगर वह सचमुच कुत्ते बेचकर सोने के सिक्के कमा लाया है । इस बात पर उसे आश्चर्य भी हुआ कि उसने मजाक़ में जो बात कही, वह सचमुच सत्य निकली !

अब अमीर के मन में भी खूब धन बटोरने का लोभ पैदा हो गया । उसने अपनी सारी जायदाद बेच डाली, उस धन से हज़ारों कुत्ते खरीद लिये और उन्हें लेकर राजधानी में जा पहुँचा । वहाँ जाकर पहरेदारों से झगड़ा मोल लिया । पहरेदारों ने उसे, और कुत्तों को भी अन्दर दी, पहरेदारों ने भी यही किया । आखिर कुत्ते भी भूँक उठे ।

यह शोरगुल सुनकर राजा ने महल की छत पर से देखा और अपने पहरेदारों को आदेश दिया कि उस व्यक्ति को अपने कुत्तों के साथ अन्दर भेज दे ।

अमीर ने राजा से कहा कि वह कुत्तों का सौदा करने आया है । अमीर का नाम सुनते ही राजा ने समझ लिया कि इसीने एक गरीब को धोखा दिया है । राजा ने अमीर से कहा–"मैंने एक ही बार कुत्ते खरीद लिये, अब मुझे कुत्तों की ज़रूरत नहीं है, बेचारे, तुम देरी करके आये हो!"

अमीर आदमी जैसे कुत्तों को लेकर राजधानी में गया था, वैसे ही लौट भी आया । लेकिन उसकी सारी संपत्ति समाप्त हो गयी थी । इसके बाद बहुत दिनों तक लोग अमीर के कुत्तों के सौदा की चर्चा करके आनंद उठाते थे ।





कवि का सम्मान

देवगिरि में एक प्रसिद्ध आशुकवि था ।

वह हर साल अपनी पत्नी को साथ ले किसी न किसी दूसरे राज्य में चला जाता, वहाँ पर तीर्थाटन करता, वहाँ के राजा के संबंध में पूरा वृत्तांत जान लेता, तब राजदरबार में जाकर राजा के संबंध में आशुकविता सुनाता । उसके द्वारा सम्मान पाकर देवगिरि को लौटता, आराम से अपने दिन गुजार देता था ।

एक साल वह कवि अमरावती नगर में पहुँचा । पति-पत्नी ने नगर के सारे दर्शनीय स्थानों को देख लिया । कवि ने वहाँ पर लोगों के मुँह से सुना कि अमरावती का राजा शासन-कार्यों में दक्ष है, और कवियों के प्रति आदरभाव रखता है । राजा का पूरा वृत्तांत जान लेने के बाद अपनी पत्नी को धर्मशाला में ठहराया । राजदरबार में पहुँचकर राजा को आशीर्वाद दिया और उन पर आशुकविता भी रचकर तत्काल सुना दी ।

कवि की प्रतिभा पर मुग्ध हो राजा ने पूछा–"क्या तुम अमरावती को अपना निवास बनाओगे?"

"नहीं, महाराज! मैं किसी भी देश में तीर्थाटन के निमित्त ही जाता हूँ । देवगिरि मेरा स्थाई निवास है । उसे छोड़कर मैं अन्यत्र नहीं रह सकता ।" कवि ने जवाब दिया ।

राजा को कवि के वचनों से निराशा हुई । उसे अपने देश से एक पैसा भी बाहर जाना कतई पसंद नहीं है । उसका उद्देश्य कि उसका देश स्वयं समृद्ध हो । इसलिए कवि को किसी भी प्रकार का पुरस्कार देना राजा को पसंद न था ।

फिर भी अपने प्रति ऐसी सुंदर कविता सुनानेवाले कवि का सत्कार करना राजा का कर्तव्य है, इसलिए राजा ने कवि से निवेदन

किया कि उसका आतिथ्य स्वीकार करे। कवि ने राजमहल में भोजन किया, उसके द्वारा सुंदर वस्त्र पाकर मन में बड़ा निराश हुआ, फिर भी प्रकट रूप में प्रसन्नता का अभिनय किया।

"क्या आपने राजा के दर्शन किये! कविता सुनायी उन्हें? राजा ने कौन-सा पुरस्कार दिया?" कवि की पत्नी ने पूछा।

"बेचारे उनके पास क्या है, देने को?" कवि ने कहा।

"क्या राजा के पास संपत्ति नहीं है?" पत्नी ने आश्चर्य के साथ पूछा।

"भूल तो मेरी थी। जो विद्वान नहीं, उन्हें मैंने रसिक सम्राट बताया। जो बिल्ली को देख डरते हैं, उन्हें महान शूर कहकर प्रस्तुति की। ये सारी बातें सुनकर राजा ने यह नहीं कहा कि मैं कुछ नहीं दे सकता। सिर्फ़ खाना खिलाकर कपड़े देकर भेज दिया।" कवि ने कहा।

"वह खाना भी तो जनता की संपत्ति है न?" पत्नी ने पूछा।

[illegible] सभी लोग लगभग राजा के गुप्तचर थे। इसलिए कवि और उसकी पत्नी के बीच जो वार्तालाप हुआ, वह समाचार उसी रात को राजा तक पहुँचा।

दूसरे दिन सवेरे कवि अपनी पत्नी के साथ देवगिरि के लिए चल पड़ा। इसके थोड़ी ही देर बाद एक बैल गाड़ी रास्ते में उन्हें दिखायी दी। गाडीवाले ने उनसे बताया कि वह भी देवगिरि जा रहा है और उन दोनों को गाड़ी पर बिठाया।

कवि के घर पहुँचने के थोड़ी देर बाद अमरावती से राजा के दूत वहाँ पहुँचे। कवि के सामने एक गठरी रखते हुए बोले–"महाराजा ने आपके पास पचास हज़ार सिक्के पुरस्कार स्वरूप भेज दिये हैं। इतनी भारी गठरी को आप उठाकर नहीं ले जा सकते थे, इसलिए हमारे द्वारा भेज दिया है।" यह कहकर दूत चले गये।

उसी वर्ष कवि ने देवगिरि से अमरावती के लिए अपना निवास बदल लिया।





पैसों का पेड़

दामोदर का बाप जब मरा तब दामोदर की उम्र दस साल की थी। इसलिए उस परिवार पर बड़ी विपत्ति आ पड़ी। फिर भी दामोदर की माँ बड़ी मेहनत करके उसे पाल-पोसने लगी।

दामोदर जब बड़ा हुआ तब उसकी माँ बड़ी निराश हो गयी, क्योंकि वह काम-धाम कुछ करता न था, उल्टे बेकार घूमा करता। साथ ही वह बड़ा बेवकूफ निकला, हमेशा अपनी माँ से पैसे माँगा करता था।

आखिर दामोदर की माँ खीझ उठी और बोली–"बेटे, तुम हमेशा पैसे माँगते हो। क्या यह सोचते हो कि हमारे आंगन में पैसों का पेड़ उग आया है?"

"तब तो मैं काम करूँगा। मैं पैसे गाड़ दूंगा। पैसे का पेड़ उगाकर जब पैसे चाहे मैं तब पैसे तोड़ लूंगा।" दामोदर ने कहा।

"अरे पगले, पैसे गाड़ने से उगते नहीं! तुम देश में घूमकर इस बात का पता लगा लो कि पैसे का बीज कहाँ पर मिलता है?" दामोदर की माँ ने क्रोध में आकर कहा।

अबोध दामोदर ने अपनी माँ की बातों पर यक़ीन किया और घर से चल पड़ा। दामोदर के जान-पहचानवालों में कई अमीर भी थे। उनके पास जाकर उसने पैसे के पेड़ के बारे में पूछा।

अमीरों ने दामोदर के भोलेपन पर हँसकर मजाक़ में कहा–"अरे, पैसे का पेड़ यहाँ कहाँ है? जंगल में मिलता है।"

दामोदर उनकी बातों पर यक़ीन करके जंगल की ओर चल पड़ा। जंगल में एक बूढ़ी सूखी लकड़ियाँ बीनते उसे दिखाई दी।

"नानी, पैसे के पेड़ का बीज कहाँ मिलता है?" दामोदर ने बूढ़ी से पूछा।

रमेश उपाध्याय

बूढ़ी ने दामोदर की ओर देखा और कहा–"बेटा, शाम होने को है। थोड़ी लकड़ियाँ बीन लो जल्दी, बाद को बता दूँगी!"

उस खुशी में दामोदर जल्दी-जल्दी लकड़ियाँ बीनने लगा। जब शाम हुई तो बूढ़ी ने दामोदर से कहा–'बेटा, मैं बूढ़ी हो गयी हूँ। ये लकड़ियाँ मैं ढो नहीं सकती। ज़रा, घर पहुँचा दो।"

दामोदर लकड़ियों का गट्ठर सर पर रखकर बूढ़ी के पीछे उसके घर पहुँचा।

"बेटा, गाँव में जाकर ये लकड़ियाँ बेचकर पैसे ले आओ।" बूढ़ी ने समझाया।

दामोदर लकड़ियों का गट्ठर लिये गाँव में गया। लकड़ियाँ बेचकर पैसे बूढ़ी को ला दिया। इस पर बूढ़ी बहुत खुश हुई।

"नानीजी, अब बताओ, पैसे के पेड़ का बीज कहाँ मिलता है?" दामोदर ने बूढ़ी से पूछा।

"अरे समय आने पर मैं ही बता दूँगी, तुम तब तक सब्र करो।" बूढ़ी ने समझाया।

हर रोज़ जंगल में जाता, लकड़ियाँ काट लाता, उन्हें बाजार में बेचकर पैसे बूढ़ी को देता गया।

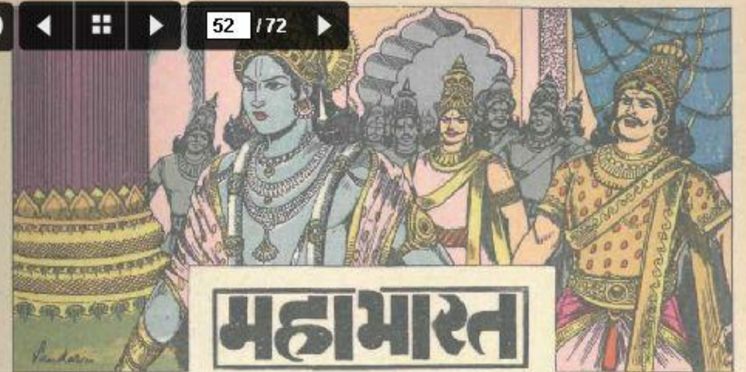
दिन, सप्ताह और महीने बीत गये। दामोदर रोज़ जंगल में जाता, लकड़ियाँ काटता, उन्हें बेचकर बूढ़ी को पैसे दे देता।

एक दिन बूढ़ी ने पैसों की एक भारी गठरी लाकर दामोदर के हाथ दी। दामोदर के आश्चर्य का कोई ठिकाना न रहा।

इस पर बूढ़ी ने कहा–"देखा है न बेटा? मेहनत करने पर पैसे कमा सकते हो! मेहनत ही पैसों का बीज है। अब तुम घर जाओ। मेहनत करके अपनी माँ को खुश रखो।"

उस दिन दामोदर बूढ़ी से विदा लेकर घर लौट गया। मेहनत के पैसों के साथ अपने पुत्र को घर लौटे देख उसकी माँ बहुत खुश हुई।





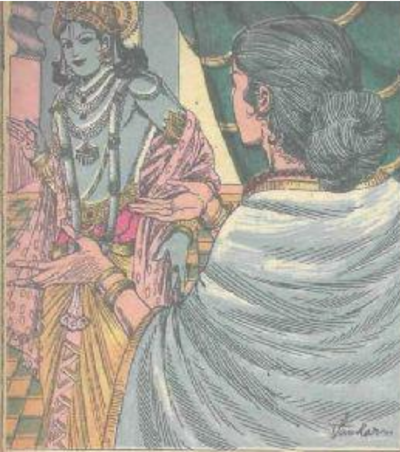
महाभारत

धृतराष्ट्र को कृष्ण ने जो दिव्य दृष्टि प्रदान की, उसके द्वारा उसने कृष्ण के विश्वरूप को देखा। तब उसने कृष्ण से कहा–"भगवन, तुमने बड़ी कृपापूर्वक ये दिव्य नेत्र प्रदान किये, इन्हें तुम वापस ले लो। जिन नेत्रों से मैंने तुम्हारे रूप को देखा, उन नेत्रों से मैं साधारण मानव और इस विश्व को देखना नहीं चाहता।"

दूसरे ही क्षण सभाभवन पूर्ववत हो गया। कृष्ण भी साधारण रूप में दिखाई दिये। कृष्ण ने सभा में उपस्थित ऋषियों से विदा लेकर एक हाथ सात्यकी तथा दूसरा हाथ विदुर के हाथ दिया, और सभाभवन से निकल पड़े। उनके साथ कौरव तथा अन्य राजा भी चल पड़े।

सभाभवन के द्वार पर दारुक रथ के साथ तैयार खड़ा था। कृष्ण रथ में जा बैठे, तब धृतराष्ट्र ने उनसे कहा–"कृष्ण, तुम मुझे गलत न समझो। पाँडवों के प्रति मेरे मन में किसी प्रकार का द्वेष नहीं है; मैंने दुर्योधन को तुम्हारे सामने ही समझाया, सभी सभासदों ने भी सुना।"

इसके बाद कृष्ण ने धृतराष्ट्र, भीष्म, द्रोण, बाह्लिक, कृप इत्यादि बुजुर्गों को लक्ष्य करके कहा–"महात्माओ, आप लोगों ने देखा कि सभा में क्या क्या हुआ है! दुर्योधन रोष के मारे सभा से चला गया है। धृतराष्ट्र ने अपने को असमर्थ बताया है। मैं जिस कार्य के निमित्त आया था, वह पूरा हो चुका। मैं युधिष्ठिर के पास



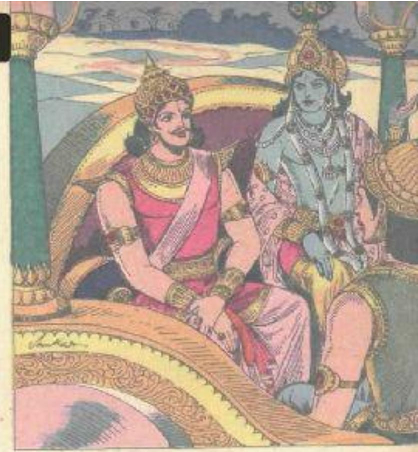
वापस जा रहा हूँ। मुझे आज्ञा दीजिये।" सभी बुजुर्ग कृष्ण को विदा करके अपने-अपने घर चले गये। तब कृष्ण रथ पर अपनी फूफी कुंती के घर गये। कुंती को सारा समाचार सुनाया और कहा–"देवी, सब लोगों ने अनेक प्रकार से दुर्योधन को समझाया, पर उसने सुनने का नाम तक नहीं लिया। लगता है कि कौरवों का अंतिम समय निकट आया है। अर्जुन उन्हें दावाग्नि की तरह जला देगा। मैं पांडवों के पास जा रहा हूँ। क्या तुम कोई संदेशा भेज देना चाहती हो?"

"बेटा, युधिष्ठिर से कहो कि वह धर्ममार्ग का अतिक्रमण न करे। बाहुओं इसके वास्ते उन्हें हिंसा भी करनी पड़े तो वह विधि का विधान ही कहा जायगा। सुना है कि प्राचीन काल में कुबेर ने मुचिकुंद नामक राजर्षि को समस्त पृथ्वी मण्डल देना चाहा, मगर उसने उसे ग्रहण करने से अस्वीकार करते हुए कहा था–"मैं अपने बाहुबल से जो राज्य जीत सकूँगा, वही मेरे लिए पर्याप्त है।" इस वक्त युधिष्ठिर जिस मार्ग का अनुसरण कर रहा है, वह मुझे बिलकुल पसंद नहीं है। वह मार्ग राजा पांडु अथवा भीष्म के लिए भी स्वीकार योग्य नहीं है। उससे कहो, युधिष्ठिर के लिए प्रतिनित्य मैं यज्ञ, दान, तप, वीरता, बल की प्राप्ति चाहती हूँ। राज्य का शासन धर्मपूर्वक करना उत्तम क्षत्रिय का लक्षण है। भिक्षाटन, कृषि और वाणिज्य क्षत्रिय के लिए शोभा नहीं देते। पांडवों को अपने पिता के राज्य का संपादन करना चाहिए। परायों के आश्रय में जीने से मुझे कोन-सा सुख प्राप्त होगा? युधिष्ठिर से कह दो कि वह युद्ध करके अपने पिता और पितामहों को उत्तम लोकों की प्राप्ति में योग दे।"

कृष्ण कुंती के महल से निकलकर कौरव प्रमुखों से विदा ले सात्यकी और कर्ण को अपने रथ पर बिठाकर रवाना हुए। रथ

पहुँचा तब कृष्ण ने कर्ण से एकांत में कहा–"कर्ण! तुम ने वेद और धर्मशास्त्रों का अध्ययन किया है। इसलिए तुम सारी बातें समझ सकते हो। कन्या के गर्भ से जिस का जन्म होता है, उसे कानीन कहते हैं। ऐसी कन्या जिस के साथ विवाह करेगी, वही व्यक्ति कानीन का पिता है। तुम कुंतीदेवी के गर्भ से कानीन होकर पैदा हुए हो, इसलिए तुम राजा पांडु के ज्येष्ठ पुत्र हो। धर्मशास्त्र के अनुसार तुम राजा बनने योग्य हो। पिता के पक्ष में पांडव तथा माता के पक्ष के वृष्टिवंशी लोग तुम्हारे रिश्तेदार हैं। तुम मेरे साथ चलोगे तो पांडव, उनके पुत्र, पांडवों के पक्ष में लड़ने के लिए आये हुए सभी राजा तुम्हारे चरणों में प्रणाम करेंगे। तुम्हारा राज्याभिषेक होगा। द्रौपदी तुम्हें अपने छठे पति के रूप में स्वीकार करेगी। युधिष्ठिर तुम्हारे लिए युवराजा बनकर रहेगा। तुम राज्य ग्रहण करोगे तो कुंतीदेवी प्रसन्न हो जायेंगी।"

इस पर कर्ग ने कहा–"कृष्ण, मेरे प्रति प्रेम और स्नेह के कारण तुमने जो कुछ बताया, मैंने सुना। इसमें कोई संदेह नहीं है कि मैं राजा पांडु का पुत्र हूँ। कुंतीदेवी ने मेरा जन्म देकर मुझे नदी में फेंक दिया



तो अतिरथी नामक सूत ने मुझे ले जाकर अपनी पत्नी राधा के हाथ सौंप दिया। असंख्य यातनाएँ झेलकर मेरा पोषण करने वाले उन दंपति का श्राद्ध करना क्या मेरा धर्म नहीं है? उन लोगों ने मेरा वसुषेण नामकरण किया। मैंने उनके रिश्तेदारों की कन्या के साथ विवाह भी किया है। मेरे पुत्र और पीत्र भी हो गये हैं। गत तेरह वर्षों से धृतराष्ट्र के महल में, दुर्योधन के आश्रय में राजभोगों का अनुभव कर रहा हूँ। मेरा समर्थन पाकर ही दुर्योधन पांडवों के साथ युद्ध के लिए तैयार हो चुका है। उसने अर्जुन के साथ द्वन्द्व युद्ध करने को मुझ से बताया है। इसलिए मैं भय या लोभ के



कारण भी सही दुर्योधन के प्रति अन्याय नहीं कर सकता। मैं अर्जुन के साथ युद्ध न करूँगा तो हम दोनों का अपयश होगा। तुम्हारी सहायता पाकर पांडव अवश्य विजयी होंगे। युधिष्ठिर को यदि यह मालूम हो जाय कि मैं उसका अग्रज हूँ तो वह राज्य की कामना न करेगा। मैं यदि सारा विश्व भी जीत लूँ तो उसे दुर्योधन को ही दूँगा। इसलिए युधिष्ठिर को ही सारी पृथ्वी पर शासन करने दो। दुर्योधन को प्रसन्न करने के लिए मैंने पांडवों को नीचा दिखाते हुए अपने विचार प्रकट किये हैं। इसके लिए मैं पश्चत्ताप कर रहा हूँ। मगर मेरी ये बातें किसी से

सम्बद्ध करो।"

इस पर कृष्ण ने हँसकर कहा–"तब तो तुम राज्य की कामना नहीं रखते। अच्छी बात है। यह महीना युद्ध के लिए अनुकूल है। एक सप्ताह में अमावास्या पड़ेगी। तुम भीष्म, द्रोण और कृपाचार्य से कहो कि उस दिन युद्ध प्रारंभ किया जाय। तुम भी युद्ध के लिए तैयार हो जाओ।"

इसके बाद कर्ण ने कृष्ण के साथ आलिंगन किया, उनसे विदा लेकर अपने रथ पर घर लौट आया।

कृष्ण के चले जाने पर विदुर ने कुंतीदेवी के पास आकर कहा–"मैं जो नहीं चाहता था, वही होने जा रहा है। पांडव और कौरव महा युद्ध में लाखों लोगों के प्राणों की बलि देने जा रहे हैं। कृष्ण अपने कार्य में असफल हो घर लौट गये हैं।"

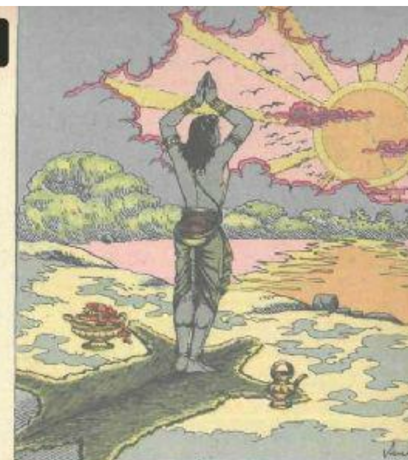
कुंतीदेवी को भी युद्ध में भीष्म, द्रोण आदि जैसे महापुरुषों का मर जाना अत्यंत भयंकर प्रतीत हुआ। उसे लगा कि अपने पुत्रों के द्वारा ज्ञातियों का वध करके युद्ध में विजय पाने की अपेक्षा दरिद्रता में घुल-घुलकर मरना कहीं अच्छा है। उसने यह भी सोचा कि होनेवाली विपत्ति का कारणभूत कर्ण है और वह पांडवों के साथ

चुका है। इसलिए कुंती ने कर्ण के मन को पांडवों के अनुकूल बदलने का निश्चय किया और गंगा के तट पर पहुँची, जहाँ कर्ण जप कर रहा था।

कर्ण ने जप समाप्त करके कुंती को देखा। प्रणाम करके बोला–"माँ, मैं कर्ण हूँ, तुम्हारे चरणों में प्रणाम करता हूँ। बताओ, तुम किस काम से यहाँ पर आयी हो! मेरे द्वारा तुम्हारी क्या सहायता हो सकती है?"

"बेटे, तुम मेरे पुत्र हो! राधा के पुत्र नहीं हो। सूतवंशी भी नहीं हो! मेरी बात पर विश्वास करो। तुम अपने भाइयों से अपरिचित हो! दुर्योधन के वास्ते महान पाप करने जा रहे हो, यह अनुचित है। अर्जुन ने अपनी शक्ति के बल पर जिस राज्य को जीता, उसे कौरवों ने हड़प लिया है। तुम उसे धृतराष्ट्र के पुत्रों से ग्रहण करके तुम्हीं उस राज्य पर शासन करो। बलराम और कृष्ण जैसे तुम और अर्जुन प्रेमपूर्वक रहो। तुम दोनों एक हो जाओगे तो तुम्हारे लिए कोई भी चीज असंभव न होगी।" कुंती ने समझाया।

ये बातें सुनकर कर्ण जरा भी विचलित नहीं हुआ। उसने कुंतीदेवी से यों कहा–"माँ, मैं तुम्हारी बातें सुन नहीं सकता।



तुमने मेरे प्रति महान पाप किया है। कोई भी शत्रु मेरे प्रति इससे बड़ा पाप नहीं कर सकता। मेरे पैदा होते ही तुमने मुझे फेंक दिया। मैं क्षत्रिय के रूप में जन्म लेकर सूत के रूप में पला हूँ। मैं क्षत्रियों के संस्कारों से बिलकुल अपरिचित हूँ। आज तक तुमने मेरे कुशल-क्षेम जानने का प्रयत्न नहीं किया। आज तुम अपनी भलाई के वास्ते हित की बातें मुझे समझाती हो। इस समय मैं पांडवों के पक्ष में जाऊँगा तो लोग यही कहेंगे कि मैं डरकर उनके पक्ष में गया हूँ। युद्ध की तैयारियाँ हो जाने के बाद मैं यह घोषित करूँ कि मैं पांडवों का भाई हूँ, तो क्या

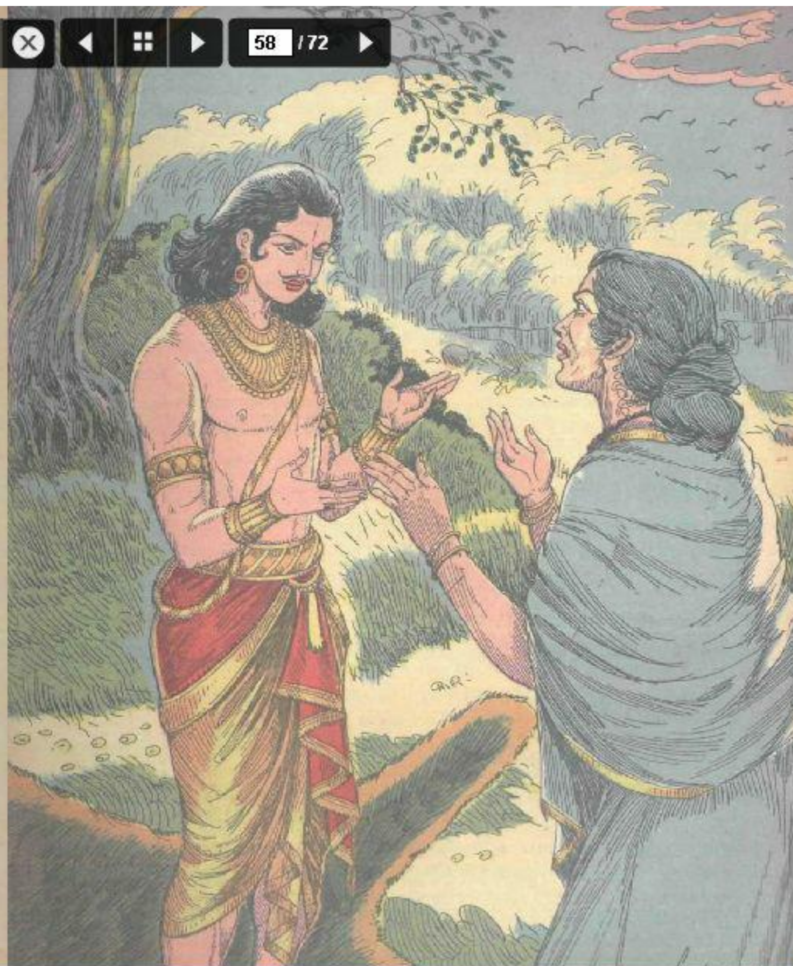


सभी राजा मेरी निंदा नहीं करेंगे? धृतराष्ट्र के पुत्रों ने मुझे आश्रय दिया और मेरा आदर-सत्कार किया। क्या मैं उनका निरादर करूँ? मेरी शक्ति पर निर्भर हो वे युद्ध के लिए तैयार हो गये हैं। उनका ऋण चुकाने के लिए मुझे अपने प्राणों की आहुति देनी होगी। दुर्योधन आदि कौरवों के साथ में और मेरे पुत्र अंत तक लड़ेंगे। तुम अपने पुत्रों के वास्ते डरकर मेरे पास आयी हो, इसलिए मैं तुम्हें निराश न करूँगा। मैं सिवाय अर्जुन के तुम्हारे पुत्रों में से और किसी का भी वध न करूँगा। अर्जुन का वध करने पर ही मेरे बल और पराक्रम सार्थक होंगे। मुझसे मिलाकर तुम्हारे पांच पुत्र होंगे। यदि मैं मारा जाऊँ तब भी तुम्हारे पांच पुत्र होंगे। तुम्हारे छे पुत्र कभी जीवित नहीं रह सकते। इसलिए तुम निश्चित रहो।"

कुंती ने दुख के आवेश में कर्ण के साथ आलिंगन करके कहा–"बेटा, विधि का विधान है। कौरवों का नाश निश्चित है। मगर तुम यह बात भूल मत जाओ कि तुमने अपने चार भाइयों की रक्षा करने का वचन दिया है। तुम्हारा शुभ हो!" यों कर्ण को आशीर्वाद दिया। कर्ण कुंती देवी के चरणों में प्रणाम करके अपने घर लौट आया, कुंती भी अपने निवास को लौट आयी।

हस्तिनापुर से उपप्लाव्य को लौटते ही कृष्ण ने पांडवों को सारा समाचार सुनाया। उन्हों ने बड़ी देर तक पांडवों के साथ मंत्रणा की। तब अपने निवास को लौटकर विश्राम किया।

उस दिन रात को पांडवों ने कृष्ण के साथ युद्ध की तैयारी के संबंध में गंभीर चर्चा की। पांडवों के पक्ष में लड़ने के लिए सात अक्षौहिणियों की सेना तैयार थी। प्रत्येक अक्षौहिणी के लिए एक नेता नियुक्त किया गया। विराट, द्रुपद, धृष्टद्युम्न, शिखण्डी, सात्यकी, चेकितान



और भीम सात अक्षौहिणियों के नेता थे। इन सातों नेताओं का एक महा नायक हो और वह भीष्म की समता कर सकता हो, ऐसा व्यक्ति कौन हो सकता है! यह सवाल युधिष्ठिर ने अपने भाइयों के सामने रखा। इसपर सहदेव ने विराट का नाम सुझाया, नकुल ने द्रुपद का, अर्जुन ने धृष्टद्युम्न का और भीम ने शिखण्डी का नाम सुझाया। किन्हीं दो के विचार मेल नहीं खाते थे, इसलिए युधिष्ठिर ने सलाह दी कि कृष्ण के विचार के अनुसार महा सेनापति को नियुक्त किया जाय। इसपर कृष्ण ने धृष्टद्युम्न का समर्थन किया।

सभी राजाओं को जब मालूम हो गया कि पांडवों की सेनाओं का प्रधान सेनापति धृष्टद्युम्न नियुक्त किया गया है, तब सब लोग बहुत प्रसन्न हुए। सैनिक-संचालन शुरू हुआ। रथ आगे बढ़े, शंख और दुंदुभियों का निनाद सुनायी दिया। तब पांडवों की सेनाएँ महा समुद्र की भांति चल पड़ीं। सेना के अग्रभाग में भीम, [illegible] और सहदेव [illegible] लगे। उनके [illegible] धृष्टद्युम्न तथा पांचाल योद्धा चले। सेना के मध्य भाग में युधिष्ठिर थे। सेना के साथ तरह-तरह के वाहन, यंत्रोंवाले आयुध, वैद्य, और परिचारक भी थे। मगर द्रौपदी अपने दास और दासियों के साथ उपप्लाव्य में ही रह गयी।

पांडवों ने सेनाओं के साथ रवाना होने के पूर्व ब्राह्मणों को गायें और सोने का दान करके उनके आशीर्वाद प्राप्त किये।

सेना के पृष्ठ भाग में विराट, कुंति भोज, धृष्टद्युम्न के पुत्र, चालीस हज़ार रथ, दो लाख घोड़े, पांच लाख पैदल सेना, साठ हज़ार हाथियों को साथ ले चेकितान, धृष्टकेतु, सात्यकी, कृष्ण और अर्जुन भी चल पड़े।

उस महा सेना के कुरुक्षेत्र में पहुँचते ही शंख बज उठे। सैनिक परमानंदित हो दिशाओं को प्रतिध्वनित करते सिंहनाद कर उठे।





शिव-लीलाएँ

[५]

दक्षिण में पोत्तपिनाडु नामक प्रदेश में एक जंगल था। उसमें शबर जाति के लोग निवास करते थे। ऊडुमूरु उसकी राजधानी थी। जंगली शबर शिकार तथा खेती करके अपने पेट भरते थे।

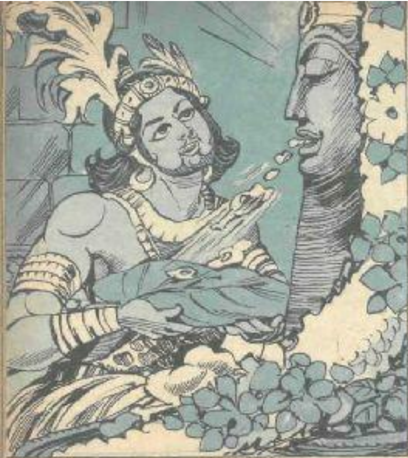
शबर जाति का राजा नाथनाथ था। उसकी पत्नी का नाम तंडे। उनके तिन्नडु नामक पुत्र था। जब वह बड़ा हुआ तब उसने अस्त्र-शस्त्र की विद्याएँ सीख लीं। वह इन विद्याओं में ऐसा प्रवीण हो गया था कि जंगल में भागनेवाले हिरण और आसमान में उड़नेवाले पक्षी को वह बड़ी आसानी से मार गिरा देता था।

शबर जाति के लोगों ने अपने राजा से निवेदन किया कि तिन्नडु को शिकार खेलने की विद्या सिखलानी होगी। इसके लिए सभी शबरों ने पहले शिवजी की पूजा की, जानवरों की बलि दी, महुए की शराब पीकर नाच-गान किया, जुलूस निकाला। दूसरे दिन शिकार के लिए आवश्यक जाल, फंदे, कुत्ते आदि तैयार किये। तब बड़ी धूमधाम के साथ तिन्नडु अपनी जाति के लोगों को साथ ले तिरुपति के पहाड़ों की ओर चल पड़ा।

शबरों ने तरह-तरह के जंगली जानवरों तथा पक्षियों को मारा। मांस के टुकड़ों को लोहे की छड़ियों में चुभोकर जलाया, जंगली शहद में मिलाकर खाया। इस तरह शिकार खेलते कई दिन बिताये।

एक दिन शिकार खेलते-खेलते तिन्नडु थक गया और एक मौलसिरी पेड़ की छाया में लेटकर सो गया। नींद में उसने

अंतिम पृष्ठ का चित्र



सपने में एक महा पुरुष को देखा। उसके शरीर पर भभूत मला हुआ था। वह बघचर्म धारण किये हुए था, सर पर जटाएँ लटक रही थीं। कंधों पर कपालों की माला और कंठ में लिंग सुशोभित थे। उस महापुरुष ने सपने में तिन्नडु से यों कहा–"बेटा, यहाँ के पहाड़ की तराई में, सुवर्णमुखी के तट पर बरगद के नीचे शिवजी हैं। तुम उनकी पूजा करो।"

तिन्नडु चौंककर उठ बैठा। उसने आश्चर्य के साथ चारों ओर देखा। उसके अनुचर शिकार खेलने में मशगूल थे। इतने में एक जंगली सुअर चिल्लाते उस ओर आ निकला। तिन्नडु ने सुअर का

[illegible] गया। जहाँ वह सुअर अचानक अदृश्य हो गया था, वहीं पर उसे एक शिव मंदिर दिखाई दिया। सपने में एक महापुरुष ने तिन्नडु को इसी मंदिर के बारे में बताया था। इसलिए तिन्नडु ने सोचा कि यह जो कुछ हुआ है, वह सब शिवजी की लीला और माया है। तब तिन्नडु ने लिंग के सामने साष्टांग प्रणाम किया और कहा–"भगवन, इस पहाड़ी प्रदेश में जहाँ शेर और बाघ घूमा करते हैं, नदी के किनारे तुम क्यों बैठे हुए हो? तुम्हें भूख लगेगी तो खाना-पानी कौन ला देगा? मेरे घर ऊडुमूरु में क्यों नहीं आते? मेरी बड़ी-छोटी बहनें तुम्हें सुअर, हिरण और पक्षियों का माँस भी पकाकर खिलायेंगी! तरह-तरह के चावल से तुम्हें खीर, शहद और फल भी तुम्हें खिलायेंगी। अगर तुम मेरे साथ न चलोगे तो मैं भी यहाँ से हिलूँगा नहीं।"

इतने में बाक़ी शबर लोग तिन्नडु की खोज करते वहाँ आ पहुँचे और बोले–"मालिक, तुमने जिस सुअर का पीछा किया, वह कहाँ गया?" मगर तिन्नडु ने इस सवाल का कोई जवाब नहीं दिया। सब ने उसे घर चलने पर जोर दिया।

"शिवजी मेरे साथ चलेंगे तभी मैं भी चलूँगा, नहीं तो नहीं, तुम लोग चले

[illegible] फिर शिवजी के ध्यान में निमग्न हो गया, इस पर सभी शबर वहाँ से चले गये।

तिन्नडु ने सोचा–"बेचारे, शिवजी कितने दिनों से भूखे हैं?" यह सोचकर उसने कंधे पर धनुष रखा और चल पड़ा। उसने एक जंगली सुअर को मारा। उसका मांस टुकड़े-टुकड़े करके जलाया, सुवर्णमुखी से पानी लाकर शिवजी के सामने रखा और तब कहा–"भगवन, इन्हें खा लो।"

परंतु शिवजी ने कोई उत्तर न दिया, तब वह रोते हुए बोला–"भगवन, तुम इस मांस को न खाओगे तो मैं तुम्हारे चरणों के सामने अपने प्राण त्याग दूंगा।"

शिवजी ने तिन्नडु की भक्ति पर प्रसन्न हो कहा–"उठो बेटा, मैं मांस खा लेता हूँ।" यों कहकर शिवजी ने सारा मांस खा लिया।

इस प्रकार कुछ दिन बीत गये। एक दिन शिवगोचर नामक एक शैव ब्राह्मण उस मंदिर में आया और बोला–"भगवन, ये झूठी तीलियाँ कैसी? यह बदबू कैसी? तुम्हारे इस पवित्र मंदिर को किसने मलिन बनाया है? तुम नहीं बताओगे तो मैं खाना-पीना छोड़कर यहीं पर अपने प्राण त्याग दूंगा।"

"हे भक्त, तुम घबराओ मत! मेरा एक जंगली भक्त अपने ढंग से मेरी सेवा कर रहा है। मैं उसकी पूजा को स्वीकार कर रहा हुँ। यदि तुम उसकी भक्ति को



देखना चाहो, मेरे पीछे छुपकर बैठ जाओ।" शिवजी ने उसे समझाया।

इतने में तिन्नडु मंदिर में आया। लिंग के सामने स्थित झूठे पदार्थों को अपने पैर से एक ओर सरका दिया। अपने मुँह में स्थित पानी को कुल्ला करके लिंग का अभिषेक किया, तब लिंग के सामने एक पत्तल डालकर मांस के टुकड़ों को परोसा।

शिवजी ने तिन्नडु की भक्ति की परीक्षा लेनी चाही, इसलिए उसने वह मांस नहीं खाया और अपनी मुंदी आँखों से आँसू गिराने लगा। इसे देख तिन्नडु घबरा गया, और आँख का इलाज करने लगा। उसने कई तरह के इलाज किये, पर कोई फ़ायदा न रहा, उल्टे शिवजी की आँख से खून बहने लगा।

तिन्नडु की समझ में न आया कि क्या किया जाय। उसने सोचा कि आँख का इलाज आँख ही है। यह सोचकर झट उसने तलवार से अपनी एक आँख निकाली और शिवजी की आँख में लगा दी।

"डरने की कोई बात नहीं। इसका भी इलाज मैं जानता हूँ।" यों कहते तिन्नडु अपनी दूसरी आँख निकालने को हुआ, तब शिवजी ने प्रत्यक्ष होकर उसका हाथ पकड़कर रोकते हुए कहा–"ठहर जाओ।"

इसके बाद शिवजी ने ब्राह्मण भक्त से कहा–"शिवगोचर, तुमने इस जंगली भक्त की भक्ति देख ली है न?" इसके बाद दोनों को लक्ष्य कर शिवजी ने पूछा–"मांग लो, तुम दोनों क्या क्या वर चाहते हो?"

"भगवान, आप हमें जो वरदान देना चाहते हैं, वही दीजिये! हम आप से क्या माँग सकते हैं?" यों कहते दोनों शिवजी के सामने साष्टांग प्रणाम करने लगे। शिवजी ने उन दोनों को फिर से सांसारिक मायाजाल में पड़ने न देकर अपने में विलीन कर लिया।



१३७. राक्षसी चित्र

उत्तर अमेरिका के कालिफ़ोर्निया नामक राज्य में ब्लैत नामक स्थान पर ये चित्र हैं। ज़मीन पर से इन चित्रों का पूर्ण रूप दिखाई नहीं देता। इसलिए इन चित्रों के चित्रकारों को ठीक से यह देखने का मौक़ा मिला न होगा कि वे कैसे चित्र अंकित कर रहे हैं। ऐसे अनेक चित्र उस प्रदेश में कंकड़ों के द्वारा अंकित हैं। इन्हें विमान के द्वारा ही देखना संभव है। १९४३ में पहली बार इनके फ़ोटो लिये गई हैं।

निम्न लिखित चित्र में दो ही चित्र दिखाई दे रहे हैं, मगर उस प्रदेश में और कुछ राक्षसी चित्र हैं। इन चित्रों की गहराई अधिक नहीं है, मगर लंबाई बहुत ज्यादा है। मनुष्य के चित्र की लंबाई सर से पैर तक १७० फ़ुट है। फैलाये गये दोनों हाथों के बीच की दूरी १५८ फ़ुट है। दूसरा चित्र लंबी पूँछवाले घोड़े का है। ई. सन्. १५४० के पूर्व उस प्रदेश में घोड़े बिलकुल न थे, इसलिए यह अनुमान लगाया जाता है कि इसके बाद ही उन राक्षसी चित्रों को अमेरिकन इंडियन्नों ने अंकित किया होगा।







